TEXT PROBLEM
WITHIN THE
BOOK ONLY

TEXT FLY
WITHIN THE
BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY
OU_180634
UNIVERSAL LIBRARY

लेफ्टिनेन्ट

तथा

महारानी का सपना और खतों की दिल्लगी

लेखक

स्वर्गीय मिर्ज़ा अज़ीमबेग चग़ताई

प्रकाशक

छात्रहितकारी पुस्तकमाला
दारागंज, प्रयाग

थम संस्करण]   सितम्बर १९४६   [मू० १।।।)

प्रकाशक

श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए०

प्रोप्राइटर—छात्रहितकारी पुस्तकमाला

दारागंज, प्रयाग

जयपुर के सोल एजेण्ट

प्रभात प्रकाशन, जयपुर

जोधपुर के सोल एजेण्ट

भारतीय पुस्तक भवन, जोधपुर

मुद्रक

सरयू प्रसाद पांडेय 'विश',

नागरी प्रेस, दारागंज,

प्रयाग।

लेफ्टिनेन्ट

यह उस समय की बात है, जब मैं बहुत छोटा-सा था। हमारे पड़ोस में एक शेख जी रहते थे। प्रायः दोपहर को वे चारपाई पर नीम के नीचे हुक्का पीते, और दो-चार आदमियों से बातें करते। एक दिन मैं भी खेलता हुआ पहुँचा। वहाँ मैंने उम्र में पहली बार लेफ्टिनेन्ट की चर्चा सुनी। उनका दामाद किसी लेफ्टिनेन्ट के यहाँ नौकर था। किस मजे से वे दूसरों से, अपनी ऐनक के ऊपर से देखकर दूसरे साहब की ओर हुक्का बढ़ाते हुये कहते थे।

"गोरों का सबसे बड़ा अफसर होता है······यों काँपती है पलटन!" हाथ हिला कर कँपकपी का दृश्य बताते! पड़ी काँपती है गोरी पलटन!

और इस लेफ्टिनेन्ट की हुलिया भी सुन लीजिये! अजी लाल रङ्ग······वह मजबूत जूता, कि मारे ठोकर तो नौकर की पेन्डुली टूट जाय! भला हमारी और आपकी मजाल है, कि जो उसकी नौकरी बजायें! गिट पिट, गिट पिट बोलता है! क्या समझे कोई? यह तो उन्हीं लोगों की (अपने दामाद के लिए) बहादुरी है, जो उससे निपटते हैं।

एक दूसरे साहब ने, जो कर्नल और जर्नल को ओहदे में ऊँचा बताया तो सिर हिला कर नाराज होकर बोले······पड़े झख मारते हैं

कन्डैल और जन्डैल ! सब······सब उससे नीचे······अजी बागरा पलटन का बादशाह······कोई दिल्लगी है······।"

प्रगट है, कि लेफ्टिनेन्ट की इज्जत किस तरह और कितनी मेरे दिल में होगी ! केवल सोचते ही होश उड़ जाते थे, कि भगवान ने एक लेफ्टिनेन्ट से पाला पड़ा दिया।

पूर्व इसके, कि मैं कुछ निवेदन करूँ, लेफ्टिनेन्ट के बारे में कुछ कह देना चाहता हूँ ! वास्तव में बीबियों की तरह लेफ्टिनेन्ट भी दो तरह के होते हैं, लड़ाका और गैर लड़ाका। अपनी कम उम्री और अनुभवहीनता के कारण, या यों कहिये कि अपनी निरीक्षण शक्ति की कमी के कारण मैं इस धोखे में था, कि लेफ्टिनेन्ट केवल लड़ाका होते हैं। और बीबियाँ केवल गैर लड़ाका। लेकिन लेफ्टिनेन्ट के बारे में एक बहुत बड़ी लड़ाई के बाद और बीवियों के बारे में एक विशेष घटना के बाद यह मालूम हुआ कि लेफ्टिनेन्ट और बीबियाँ दोनों लड़ाका और गैर लड़ाका होती हैं। लेकिन इस समय चूँकि मुझे बीवियों के बारे में कुछ नहीं कहना है, इसलिये अब अपना किस्सा सुनाता हूँ।

स्वर्गीय पिता जी नये-नये नौकर हुये थे कि दूसरे शहर के लिए बदली हो गई। सब को घर ही पर छोड़ दिया और केवल मुझे लेकर नई जगह पहुँचे, कि मकान का प्रबन्ध हो जाय तो सबको बुला लायें। डाक बंगले में जाकर ठहरे। वहाँ कई आदमी मिलने के लिए आये, और बहुत-सी बातें हुईं। बातें मकानों के बारे में थीं ! मालूम हुआ कि एक बँगला अच्छा तो खाली है, लेकिन पड़ोस के बँगले में एक पाजी लेफ्टिनेन्ट ऐसा रहता है, कि किसी को बँगले में टिकने नहीं

देता। जो भी आता है, बंगला छोड़ कर भागता है! जो साहब अभी बंगला छोड़ कर भागे थे, उन्होंने पिता जी को इस लेफ्टिनेन्ट के नौकर की बातें बताईं। "नौकर को मारता है, शोर नहीं मचाने देता, जानवर नहीं पालने देता, गोली मार देता है! बँगला बड़े सस्ते किराये पर मिल जायगा।" पिता जी शीघ्र बँगला लेने के लिए तैयार हो गये! उन्होंने जब भय से अधिक सतर्क रहने के लिए कहा, तब बोले—"जानते हैं आप इन गोरों को ठीक करने की तरकीब?······बस ठोंक चले उनको! मेरे साथ तनिक भी चीं-चपड़ की, तो उठा के दे मारूँगा!"

उन्होंने पिता जी के चौड़े-चकले सीने और दृढ़ बाजुओं की ओर ईर्षा से देखा और कुछ कह न सके। मैं सन्नाटे की हालत में था, कि भगवान, पिता जी का क्या हो गया?

(२)

बङ्गला बहुत ही खूबसूरत और आराम देने वाला था। दूसरे ही दिन उस बदमाश लेफ्टिनेन्ट का माली आया, और मालूम हुआ, कि उसने यह कहा, कि लेफ्टिनेन्ट साहब ने यह हुक्म दिया है, कि इस बँगले का भी तय करके दस रुपये महीने तनख्वाह लो। माली पिता जी के सामने लाया गया! मुझे ठीक याद नहीं कि क्या बातें हुईं, लेकिन शायद उसने कुछ गुस्ताखी की होगी, तो पिता जी ने हुक्म दिया कि इसकी मूँछें उखाड़ लो, लेकिन लेफ्टिनेन्ट के डर के मारे किसी नौकर की हिम्मत न पड़ी तो उसे डाँट कर निकाल दिया।

हफ्ते ही भर के भीतर उसने झगड़े की बातें शुरू कर दीं। एक दिन दोपहर को नौकरों को बुलाकर कहा, कि शोर न करो। पिता जी आगे तो नौकरों पर बहुत बिगड़े, कि तुम सब गये ही क्यों? फिर

एक दिन कहला भेजा, कि बँगले में झाड़ू धीरे से दिलवाओ, धूल उड़ती है। पानी भरने से कुँये की गड़ारी जोर से बोलती थी, इस पर कहला भेजा कि इसे ठीक कराओ। चूँकि नौकर ही कहने आते थे, इसलिये उन्हें जबानी ही डाँटकर जवाब दे दिये गये। एक दिन सुना, कि उसने अपने घोड़े को गोली मार दी। फिर यह सुना, कि किसी का गधा बँगले में आया, तो गोली मार दी। शाम को और सवेरे बराबर बन्दूकें चलतीं। मजाल क्या, जो कुत्ते और तोते बँगले से होकर निकलें और वह न मारे! जिन्दे घायल होकर बँगले में ही गिरते और इसी सम्बन्ध में वह अपने नौकरों पर गरजता और उन्हें मारता।

ये बातें चल ही रही थीं, कि हमारी बकरी ने उसके बँगले में हमला बोल दिया। भगवान जाने सच, कि झूठ, पर हमारे नौकरों का कहना था, कि गलत बात थी! उनके माली ने झूठा ही इलज़ाम लगाया है, बल्कि उसका कुत्ता हमारे बँगले में आता और बकरी पर झपटता। कुछ हो, लेफ्टिनेन्ट ने पिता जी को कड़ी चिट्ठी लिखी, कि तुम्हारी बकरी हमारे तार के पास आकर चिल्लाती है, हम उसे गोली मार देंगे। पिताजी ने जवाब में लिखा, कि हम तुम्हारे कुत्ते को गोली मार देंगे। उसने लिखा, कि अगर कुत्ता मर गया तो मैं तुमसे स्वयं लड़ूँगा। इस पर पिता जी ने लिखा, कि अगर यही विचार है तो बकरी और कुत्ते की जान क्यों जाये, लड़ना चाहते हो तो पहले ही लड़ लो। उसी दिन की शाम की बात है, कि रात को नौकर आया, उसने पिता जी से कहलवाया, कि "रोशनी बुझा दो, साहब सो रहा है, उसकी आँखों में रोशनी लगती है। नहीं तो साहब कहता है हम गोली मार देगा!" वास्तव में वह नशे में चूर हो रहा था। पिता जी ने

नौकर को डाँटकर भगा दिया । वह अभी गया ही था, कि खिड़की में, जहाँ से रोशनी चमक रही थी, गोली आकर लगी, और शीशा चूर-चूर होकर उड़ गया । उसका आदमी दौड़ा आया, कि साहब कहता है, कि हम तुमको गोली मार देगा । नहीं तो रोशनी बुझा दो । ।पिताजी का क्रोध के मारे बुरा हाल हो गया, लपक कर गये और अपना एक्सप्रेस राइफल निकाल लाये । आव देखा न ताव । सामने ही उसकी बैठक का दरवाजा था, जिसके शीशों में से रोशनी चमक रही थी । निशाना साध कर जो गोली मारी तो गोली दरवाजे को तोड़ती, भीतर के कमरे में उसके सिङ्गार के आइने के टुकड़ों को उड़ाती हुई दीवार में घुस गई । एक हल्लड़ मच गया । उधर से वह गरजता हुआ उठा, और इधर से पिता जी भी उसी तरह लपके । वह हाते में घुस आया; लेकिन खाली हाथ था । पिता जी भी उसी तरह बनियाइन पहने झपटे । नौकर साथ में रोशनी लिए हुये थे । दोनों में कुछ बातचीत हुई । शायद उसने पिता जी को अच्छी तरह देख लिया, कि कैसे ताकतवर आदमी हैं । वे यह कहते हुये झपटे थे, कि "इस गोरे को उठा कर दे मारूँगा । शामत आई है इसकी !" दोनों ने हँस कर हाथ मिलाया । वह अपनी तरफ चला गया, और पिता जी हँसते हुये अपनी तरफ चले आये । पिता जी हालत डर के मारे बुरी हो चुकी थी, और बेहोशी के लगभग थी । जब पिता जी आये तो खूब हँसे । इस घटना के बाद तो नौकरों ने उल्टी चक्की चला दी ।

प्रगट है, कि सेर को सवा सेर मिल गया था और फिर तो हम बहुत दिन तक रहे, किन्तु वह कुछ न बोला । बल्कि शुबरात को उसको हलुआ भेजा गया, तो वह स्वयं हलुये का टुकड़ा हाथ में लेकर खाता

हुआ चला आया और पिता जी ने भीतर से मँगाकर और खिलाया। ईद को सेंवइयाँ खिलाईं। पिता जी का शीघ्र यहाँ से तबादिला होगया।

संयोग की बात, कि बरसों बीत गये। पिता जी के तबादिले पर तबादिले हुए, और वे जगह-जगह घूमते हुये न जाने कहाँ पहुँचे, कि यही लेफ्टिनेन्ट फिर मिला।

हमारे बँगले के पास ही एक अँगरेज की मोटर बिगड़ गई। तोप की सी आवाज हुई; टायर या ट्यूब फट गया। हमारा बँगला शहर से दूर था। नौकरों ने जो देखा, तो उसे पहचान लिया। यह तो वही लेफ्टिनेन्ट था। दिन के दो बजे होंगे। वली मुहम्मद खानसामा झट कुर्सी सिर पर रखकर दौड़ा और उसकी खातिर की। उसने झट हुक्म दिया, कि खाने को लाओ। वली मुहम्मद ने झट आलू उबाले और दो मुर्गी के बच्चे जबह करके कच्चे-पक्के तैयार किये! चार अंडों का पुडिंग बनाया! नाश्ता उसने खूब डटकर किया। वली-मुहम्मद को ठोकरें भी मारीं (लेकिन बाद में मालूम हुआ कि वली-मुहम्मद ने केवल घमंड के कारण ऐसा कहा था, एक भी ठोकर नहीं मारी थी।) इनाम में दस रुपये उसको दे गया और पिताजी को सलाम कह गया।

मैं स्कूल में पढ़ता था। इस किस्से को घमंड के साथ तरह तरह से बनाकर कहता फिरता था। यहाँ तक कि इसकी भनक मास्टर साहब के कान तक पहुँची। और उन्होंने भी इस किस्से को आश्चर्य के साथ सुना, दर्जनों दूसरे लड़कों ने भी। वास्तव में यह घटना अपने ढंग के अनुसार क्या कम थी, कि शहर के इस तरफ समीप से

एक लेफ्टिनेन्ट पास हुआ। ये बातें आपको अजीब सी मालूम होती होंगी। इसलिये कि अब तो लेफ्टिनेन्टों की भरमार है। बहर-हाल, यह एक लड़ाकू लेफ्टिनेन्ट था। इन घटनाओं पर विचार करने से आपको पता चलेगा, कि लेफ्टिनेन्टी कैसी सही कसौटी है। यह पहला लेफ्टिनेन्ट था, जिससे मुझे वास्ता पड़ा। वास्ता भी क्या? लेकिन मैं लेफ्टिनेन्टी के बारे में सही और सच्ची कसौटी स्थिर करने के योग्य होगया था, कि मुझे एक और लेफ्टिनेन्ट मिले।

समय बीत चुका था। मैं अब बच्चा न था; बल्कि कालेज का विद्यार्थी था। मालूम हुआ, कि सरकार ने यह तै किया है, कि अब हिन्दुस्तानी भी लेफ्टिनेन्ट हुआ करेंगे। बल्कि कहना चाहिए, कि होगये। इनमें यह पहला लेफ्टिनेन्ट मैंने निकाह की एक दावत में देखा। वे अवध के एक रईस के लड़के थे। न मालूम क्या देखने को तैयार था, कि देखा चले आ रहे हैं एक नवजवान सिर पर दुपल्ली टोपी, खान्दानी अँगरखा, चूड़ीदार पायजामा और इस पर काला पम्प। चले आ रहे हैं सचमुच ठुमक-ठुमक। ये लेफ्टिनेन्ट थे, असली लेफ्टिनेन्ट थे। सचमुच अच्छे सजीले जवान थे। लेकिन मैं जो कुछ लेफ्टिनेन्टी का नमूना देख चुका था, उसे देखते हुये तो सिर्फ 'छम्मीजान' थे। और फिर तबाही पर तबाही यह, कि यह बड़े खुश-मिजाज, नरम दिल और मिलनसार थे। कौवाली के बहुत बड़े शौकीन। भला ये भी कोई लेफ्टिनेन्ट में लेफ्टिनेन्ट हुये। मैं लेफ्टिनेन्ट की कसौटी पर कोई राय जाहिर न कर के पाठकों से केवल इतना ही पूछना चाहता हूँ, कि यह लेफ्टिनेंट अगर बिना किसी कारण के बिगड़

कर किसी निरपराध राही के चूतड़ों पर लात मारे, तो उसके कमजोर पम्पशू की क्या हालत हो !

अवध के एक कसबे के स्टेशन पर क्या देखता हूँ कि वेटिङ्ग रूम के सामने कुर्सी पर एक इस तरह ज्यादा मोटे, लेकिन मुलायम और कोमल रोटी के गाले की तरह एक साहब बैठे हुये हैं ! बेहद ढीला पतलून, झाबरझीला ! पेटी तोंद के ऊपर इतने जोर से कसी, कि जैसे धुनकती हुई रुई की गठरी को जोर से कस दो ।

रेल आई; डाक गाड़ी ! सेकन्ड क्लास प्लेटफार्म से बाहर दूर जाकर खड़ा हुआ । ये हजरत दौड़ते, या दोड़ने और लुढ़कने के बीच वाली कार्रवाई को करते हुये चले हैं, कि इञ्जन सीटी दे देता है । होश-हवास गायब ! ज्यों-त्यों करके पहुँचे । डिब्बा प्लेटफार्म से बाहर । दोनों हाथ ऊँचा करके दोनों ओर की हेन्डिलों को पकड़ कर तख्ते पर पैर रखकर चढ़ने के लिये जो जोर लगाया तो ढीली पतलून जमीन में और झुक गई । फिर आप झुककर पेटी सहित पतलून को सँभालते हैं और इसी बीच में गाड़ी यह जा, वह जा ! लौटे चले आ आ रहे हैं । हर एक आदमी उन्हें देख रहा है । मुँह मोड़कर हँस रहा है । कुली के सिर पर होलडाल पर दृष्टि जाती है । लिखा है—लेफ्टिनेन्ट बनरजी । मैं खड़ा देखता का देखता रह गया । लेफ्टिनेन्ट गैर लड़ाका भी होते हैं ! ये डाक्टर थे, लेकिन लेफ्टिनेन्ट । मोटेपन के खिलाफ स्थानीय स्कूल में लेक्चर देने आये थे । सोचे होंगे, कि चलो एक लेक्चर मुसाफिरों को भी सही ।

यह लेफ्टिनेन्ट अगर किसी को लात मार दे; नहीं अगर लात मारने की कोशिश करे, तब क्या हो ? कम से कम, मैं क्या, आप यदि

स्वयं करीब हो तो शायद हटकर स्वयं लेफ्टिनेंट की लात के निशाने में आ जायँ। इसलिये कि सबसे सुरक्षित स्थान वही हो सकता है। नहीं तो दूसरी अवस्था में लात की चोट से अधिक डर तो स्वयं लेफ्टिनेंट की चोट मौजूद ! इसलिये, कि लात मारने की अवस्था में लेफ्टिनेंट का बैलेंस बिलकुल आउट हो जायगा, और वह न मालूम किधर और किस जोर से गिरे ! यह सही है, कि मुलायम होगा, लेकिन उसका वजन !

आप सोचेंगे, कि लेफ्टिनेंट है, तो यह क्या जरूरी है कि लात मारे ही; लेकिन मैं कहता हूँ, कि हजरत न क्यों मारे ? आखिर कोई कारण ?

वास्तव में मैं इस मजमून के द्वारा उन विचारों को फैलाना चाहता हूँ, जिनका उल्टा-सीधा लेफ्टिनेंटी से किसी प्रकार का काल्पनिक या या असली सम्बन्ध रह चुका हो। हो सकता है, कि मैं यह भी सोचता हूँ, कि अगर आप खुद लेफ्टिनेंट बनना चाहते हैं, तो इस मसले पर विचार करने में आपको कुछ मदद मिले।

जिस जमाने की चर्चा मैं करता हूँ, लेफ्टिनेंटी का शौक फैल रहा था। रईसों और डाक्टरों में गैर लड़ाका लेफ्टिनेंट दिखाई पड़ने लगे थे। तरक्की चाहने वाले, और नये विचार के आदमियों में बहुतों के सामने यह सवाल था, कि नाम के साथ लेफ्टिनेंट की अच्छी उपाधि ठीक होगी; या शब्द लेफ्टिनेंट !

लेकिन इसके अतिरिक्त सर्वसाधारण, और खास-खास लोगों के लिये भी लेफ्टिनेंट अपने लात के सहित अब भी वही अन्य देशीय चीज था। नहीं, बल्कि बुरा न होगा, अगर मैं कहूँ कि, अब भी है।

हो सकता है, कि आपका विचार हो, कि अब वह अवस्था नहीं रही। जिधर देखो, स्वयं हम लोगों में लड़ाका और गैर लड़ाका लेफ्टिनेंट दिखाई देते हैं! और अब बिल्कुल वह अवस्था नहीं है। संभव है, आपका विचार ठीक हो, लेकिन मैं अपने विचार के समर्थन में उससे सम्बन्ध रखने वाला एक नवीनतर कहानी सामने रक्खूँगा, जिसके पढ़ने से न केवल मेरे विचार का समर्थन होगा, बल्कि लेफ्टिनेंटी ने उपाधि और विजय की दुनिया में घमन्ड पैदा करने वाली जो स्थिति पैदा कर ली है, उसके विशेष पहलू पर भी काफी रोशनी पड़ेगी।

लेफ्टिनेन्ट का पहला दिन

बहुत दिन नहीं बीते, कि संयोग की खूबी से एक डाक्टर साहब के पड़ोस में रहना हुआ। कोई पचास वर्ष की उम्र, गठा हुआ दोहरा बदन। अच्छा गोरा खिलता हुआ रंग, शेरवानी पर तुर्की टोपी और ढीली-ढीली मुहरी का घसिटता हुआ पायजामा। गले में "अस्टार्नी कोप।" एक विचित्र ढङ्ग से जमीन की तरफ देखते हुये चलते! खिचड़ी दाढ़ी थी तो फ्रेंचकट, लापरवाही के कारण "विनाम्पेयर कट" होने से जबर्दस्ती रोकी जाती। बड़े सफल और अनुभवी डाक्टर थे। डाक्टरी खूब चलती थी। दिन रात फुरसत न मिलती।

एक साथ ही दुनिया की सेवा करने के विचार ने जो जोर मारा तो सेरों सोडा बाईकार खरीद कर उसके कई हिस्से किये। किसी हिस्से में नमक मिलाया तो किसी में फिटकिरी, और किसी में इसी तरह की

कोई कड़वी चीज। फिर दवाइयों के रङ्ग के अलग-अगल रङ्ग देकर और अलग-अलग खुशबू देकर माशा डेढ़ माशा की हजारों पुड़ियाँ बनवा लीं। इसी तरह बोतलों में मामूली पानी भर कर रङ्ग और खुशबू देकर किसी में फिटकिरी मिलाई, किसी में नमक। किसी को कुछ कड़ुवा कर दिया तो किसी को कुछ मीठा। पुड़ियों के नाम रख दिये। पाउडर नम्बर फलाँ, और इसी तरह पानी के भी नाम रख दिये, मिक्सचर नम्बर फलाँ। एक बहुत बड़ा साइनबोर्ड लगा दिया, कि गरीबों को दवा मुफ्त दी जाती है। जिले के कलक्टर ने इस 'फ्री डिस्पेन्सरी' का उद्घाटन किया। अब जो मरीजों का जोर हुआ तो भगवान की पनाह! सैकड़ों रोगियों को ये हो पुड़ियाँ बाँटी गईं! बहुतों को फायदा होता। किसी को जरूरत समझी, तो उन पुड़ियों के अलावा बाजार की किसी पेटेन्ट दवा की भी सलाह देदी! एक रेल-पेल हो गई मुफ्त में दवा लेने वालों की! रजिस्टर देखो तो दङ्ग हो जाओ, कि इतने रोगियों को मुफ्त दवा कैसे देते हैं। मतलब यह, कि कारखाना बड़े जोर से चल रहा था, कि एक अनोखी घटना आ उपस्थित हुई।

डाक्टर साहब के एक नौकर साहब थे, जिसका नाम अहमद था। ये पहलवान भी थे। न जाने, किसके बहकाने भड़काने से एक स्थानीय दङ्गल में सम्मिलत हुये, जिसमें हार गये। वैसे ही कुछ उखड़े मिजाज से थे, कि हार जाने से लोग और भी छेड़ने लगे।

सवेरे का समय था। डाक्टर साहब रोगी देखने गये थे और अहमद पहलवान धूप में बैठे हुये हुक्का पी रहे थे। इसी समय साइकिल पर तार वाला आया। उन्हें देखते ही मुसकुरा पड़ा और

न सलाम, न दुआ ! हँसकर कहता है—"पहलवान क्या हाल है ? मिठाई खिलाओ !"

पहलवान को हर मजाक करने वाले और मजाक की बात पर सन्देह होता था, कि इस मजाक का सम्बन्ध उसी मेरी हार से है। अतः बहुत बुरा मानते।

पास ही लड़का नौकर, जिसका नाम जुम्मन था, खड़ा था। उससे भीतर सूचना भेजी, कि तार आया है, और तार वाले को गंभीरता से बताया, कि मजाक करना बुरा है। डाक्टर साहब शहर गये हैं। तार दे दो। उसने तार देने से इन्कार किया। उन्होंने फिर जो तार के लिये पूछा, तो तार वाला हँसकर बोला—तुम्हारे डाक्टर साहब लेफ्टिनेन्ट हो गये······मिठाई खिलाओ······।

दुर्भाग्य की बात तो देखिये, जिस दंगल में ये हारे थे उसमें कोई लेफ्टिनेन्ट भी आया था। ये बिगड़ गये, कि इतने में भीतर प्रलय सा आ गया। बेगम साहिबा को जो तार की सूचना मिली तो वे खुशी के मारे चीख पड़ीं। इसलिये कि उनके छुज्जू भैया को लड़का होने को था, जिसकी सूचना की उन्हें तार के द्वारा प्रतीक्षा थी। लड़के ने जो कहा, कि तार वाला मिठाई माँगता है, तो वे समझीं, कि खबर आ गई, और पहाड़ के दिल को भी दहलाने वाले स्वर में चीखीं—"ऐ खल्लू आया !"

खल्लू आया उस किनारे पर बावरची खाने में बैठी आलू छील रही थीं। वह दौड़ी ? उधर वे फिर दिल फाड़ कर बोलीं—ऐ खल्लू आया······"छोटे भैय्या के लड़का हुआ है······।"

"ऐ, मेरी कसम······।" लल्लू आया प्रसन्न होकर दुपट्टा छोड़-छाड़ कह उठीं।

"ऐ खुदा की कसम······तार जो आया है······अरे ओ जुम्मन ······जुम्मन के बच्चे।"

"ऐ बहन मुबारक······अरे ओ जुम्मन······अरे मेरी बला पड़ जाय तुझ पर!" और दोनों दरवाजे की तरफ दौड़ीं।

"मैं कहती थी न, कि शर्त लगा लो······लड़का ही होगा···।"

"और लड़का न होता तो तार क्यों देते······अरे वह मिठाई माँग रहा है।"

"कौन?"

"अरे वही तार वाला······।" इतने में बुआ रहीमन दौड़ी हुई आईं और चिल्लाईं—"लो मुबारक······मुबारक! भाई का घर फूले-फले······।"

"अरे बुआ तार तो लाओ ····वह तो मर गया·····जुम्मन का बच्चा······।"

दरवाजे के पास ही तो थीं। बुआ रहीमन लपक के बाहर गईं, कि अहमद की आवाज आई, तेरी बदमाश की ऐसी-तैसी······हड्डी पसली एक कर दूँगा। ठहर तो जा! मैं तुझी को लेफ्टिनेन्ट बनाये देता हूँ!

उधर जुम्मन लौटकर आया, कि वह तार नहीं देता। जुम्मन को फिर दौड़ाया, कि वह तार वाले को रोके, लेकिन राम का नाम लीजिये। पहलवान साहब जो झपटे हैं, तो वह कहकहे लगाता हुआ साइकिल पर हवा होगया।

अहमद पहलवान बड़बड़ाते और बुरा भला कहते आये। वे समझीं, कि तार नहीं दिया इसलिये अहमद नाराज हैं। अहमद ने भी यही बताया, कि मिठाई माँगता था! अब उनसे यह सुन कर कि गलती होगई है, क्योंकि छुज्जू भैया को लड़का हुआ है, अहमद भी खुश होकर बोले—मुझे क्या खबर थी······रहीमन बुआ मेरी तरफ से भी बेगम साहबा को मुबारकबाद दे दो।······वह तो मजाक करने लगा तो मुझे क्रोध आ गया। मुझे क्या खबर थी? मैं तो रोक लेता और स्वयं इनाम दिलाता······खैर मुबारक हो।

डाक्टरनी खुशी के मारे दीवानी हो गईं! तू चल, मैं चल! कई दिनों से प्रोग्राम बन रहे थे। चलने का प्रबन्ध अब सामने आ गया। खल्लू आया प्रसन्न होकर कहतीं—"मैं कहती थी न बहन, कि लड़का होगा······।"

"और वही हुआ······वह तो डाक्टर साहब को ही तार देगा··· ऐ तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर! ····वह तो डाक्टर साहब को ही तार देगा! इनाम भी तो लेना है उसे—खल्लू आया बोलीं।

"इनाम मरदूद मुझसे लेता·· ···लेकिन हाँ, उसे क्या मालूम? मैं तो खुश कर देती उसे!"

मतलब की भीतर गदर-सा हो रहा था। डाक्टरनी के एकलौते भाई थे। पहली बीवी अपने बच्चों सहित खतम हो चुकी थी, कि दूसरी शादी और लड़के की नौबत आई। यह तै था, कि लड़का होगा और डाक्टरनी खुशी के मारे दीवानी हो रही थीं। खल्लू आया उनकी विधवा सहेली थी, जो बहुत दिन से साथ ही रहती थीं। अब तरह-

तरह की सलाहें हो रही थीं, कि शीघ्र ही चलने की तैयारी कर दी जाय !

अभी अधिक देर नहीं हुई, कि बाहर डिप्टी साहब का नौकर छक्का आया। ये डाक्टर साहब के बहुत बड़े दोस्त थे और नौकरों का भी दिन-रात आना-जाना था। छक्का ने भी आते ही पहलवान से छेड़-छाड़ की। डाक्टर को पूछा और हँस कर एक ही साँस में बोला—कहो भाई पहलवान, अब तो ठाट हैं ! अब भला क्यों बोलोगे ?

पहलवान ने बताया, कि डाक्टर साहब नहीं हैं ! लेकिन उससे यह जानकर पहलवान का गुस्सा भड़क उठा कि इस कारण से न बोलोगे, कि तुम्हारे डाक्टर साहब लेफ्टिनेन्ट हो गये।

लेफ्टिनेन्ट को गाली देकर पहलवान ने कहा—"लेफ्टिनेन्ट की ऐसी-तैसी ! याद रखना बच्चू, हड्डी-पसली तोड़ दूँगा !"

छक्का ने कहा—"भाई बिगड़ते क्यों हो ? हमें तो डिप्टी साहब ने भेजा······।"

"किसलिये ?"

"इसलिये, कि डाक्टर साहब को हमारी तरफ से मुबारकबाद दे आओ।"

"कैसा······कैसा······कैसा मुबारकबाद ! कोई शादी हुई है, कि कोई लड़का हुआ है !"

"वे लेफ्टिनेन्ट हो गये।"

"फिर उठूँ।"—पहलवान ने रजाई अलग करते हुये कहा—"अभी वह तार वाला आया·····तुम लोगों ने छेड़ने की सलाह कर

ली है।······हड्डी-पसली एक कर दूँगा······किसी धोखे में न रहना······आया वहाँ से लेफ्टिनेन्ट का बच्चा !"

छक्का घबराकर बोला—"यार, तुम तो नाहक बिगड़ते हो ! अच्छा भीतर कहला दो।"

"क्या कहला दूँ ?"

"यही, कि डिप्टी साहब ने मुबारकबाद दी है, कि डाक्टर साहब लेफ्टिनेन्ट हो गये।"

"तेरी ऐसी तैसी······ठहर तो जा······।" यह कर पहलवान झपटा, और एक जूता उतार कर फेंक कर मारा, और सुनाई सैकड़ों गालियाँ। वह भाग गया। ये जले-भुने फिर अपनी जगह पर आकर बैठ गये······।

लेकिन अधिक समय न बीत पाया था कि कोतवाल साहब का नौकर फच्चू चला आ रहा है। यह इनका पुराना, और उन्हें बहुत छेड़ने वाला था। क्षमा न करने लायक उसने सबसे बड़ा जुल्म किया था, कि पहलवान को उस्ताद बनाया। मिठाई न खिलाई और कसरत करने का लँगोट चुरा ले गया, हार खाने के बाद तो बहुत तङ्ग करता था। पहलवान वैसे भी बहुत जलते थे।

"कहो भाई पहलवान !" उसने आते ही कहा। उसे क्या मालूम कि अभी-अभी पारा एक सौ दस तक पहुँच चुका है। पहलवान कुछ न बोले। डाक्टर साहब को पूछा तो दबी जबान से कह दिया, कि मरीज देखने गये हैं। "कैसे आये ?"—इतना जरूर पहलवान ने पूछ लिया।

"भई मुबारकबादी देने के लिये आये हैं।" —उससे कहा। पहल-

वान ने सोचा, कि ऐसा झपेटूँ, कि निकल जाय ! अतः बन कर पूछा—"कैसी मुबारकबादी ?"

"तुम्हारे डाक्टर साहब लेफ्टिनेन्ट हो गये।"

"अच्छा।"—पहलवान ने गुस्से को छिपाते, रजाई को अलग रखते और हुक्के को अलग सरकाते हुये कहा—"लेफ्टिनेन्ट हो गये हैं ! तुम्हारे कोतवाल साहब नहीं हुये ?"

पूर्व इसके कि वह सतर्क हो जाय, पहलवान ने आकर उसे दबोच लिया—"डाक्टर साहब तो बाद में होंगे, पहले तुझे लेफ्टिनेन्ट बना दूँ !"

वह 'अरे अरे' कहता रहा और पहलवान ने उसे उठा कर दे मारा। "पहले पहले ····।"

दे घूँसा, दे घूँसा। वह दुहाई देता है। वह छुड़ा कर निकला है, कि पहलवान ने फिर उठा कर पटखनी दी और अच्छी तरह पीट कर कहा—"जावो भैया, हो गये लेफ्टिनेन्ट·····सलाह कर रखी है ····· सबेरे से परीशान कर रक्खा है।"

उसे बोलने न दिया और फिर जो गुस्सा आया तो उसने भी कुछ कहा, और ये मारने दौड़े ! वह गालियाँ देता और कोतवाल साहब से शिकायत करने के लिये कहता हुआ चला गया।

× × ×

कोतवाल साहब के नौकर को गये हुये देर हो चुकी थी और पहलवान का गुस्सा भी ठंडा हो चुका था, कि डाक्टर साहब आगये। मकान के बरामदे की सीढ़ियाँ चढ़ते हुये उन्होंने अहमद को पुकारा और मालिक तथा नौकर में कुछ इस तरह की बातें हुईं :—

डाक्टर—अहमद !

अहमद—जी हुजूर (दौड़ता आता है) तार मिल गया हुजूर…।

डाक्टर—(कुर्सी पर बैठते हुये) तार तो मिल गया; लेकिन तुम यह बताओ कि तुमने कोतवाल और डिप्टी साहब के नौकरों को क्यों मारा ? तुम्हारे ऊपर अब मुकदमा चलेगा।

अहमद—(घबड़ा कर) मुकदमा !

डाक्टर—हाँ, सजा होगी।

अहमद—और मेरी कुछ सुनवाई न होगी। मेरे साथ भी इन्साफ होना चाहिये।

डाक्टर—(बिगड़ कर) तुमने क्यों मारा ?

अहमद—सरकार…मेरी सुनें तो कहूँ…नासूर पैदा कर दिये हैं इन दोनों ने…यह कोतवाल साहब का नौकर पुत्तू और डिप्टी साहब का नौकर छक्का…।"

डाक्टर—क्या हुआ ?

अहमद—हुआ यह सरकार कि ये हमेशा मुझे छेड़ते हैं।

डाक्टर—छेड़ते हैं !

अहमद—जी सरकार !

डाक्टर—(बिगड़ कर) क्या छेड़ते हैं ?

अहमद—मुझे पहलवान पहलवान कह कर छेड़ते हैं और…।

डाक्टर—तुम हो जो पहलवान।

अहमद—तो सरकार इसलिये हैं कि हमारा मजाक उड़ायें। छेड़ें, हँसे और हमारा लँगोट चुरा लें।…।

डाक्टर—बस यही बात है ! इसीलिये मारा ?

अहमद — नहीं सरकार. आप सुनें तो!···मुझे छेड़ते हैं और हुजूर हम आप का नमक खाते हैं, आपको बुरा-भला कहते हैं।

डाक्टर—हमें कहते हैं, हमें!!

अहमद — जी सरकार, कम्पोन्डर साहब खाना खाने गये हैं। वह आयें तो पूछ लिया जाय!

डाक्टर—क्या कहते हैं?

अहमद—अभी परसों की बात है, यह पुत्तू हुजूर को बुरा भला कहने लगा।

डाक्टर—(बिगड़ कर) क्या कहने लगा?

अहमद—यह कहने लगा, कि हमारे कोतवाल साहब तुम्हारे डाक्टर साहब को मिन्टों में हथकड़ियाँ पहना सकते हैं। फिर सरकार मैंने भी कह दिया।

डाक्टर— क्या कह दिया।

अहमद—मैंने कह दिया, कि तुम्हारे कोतवाल साहब कोई चीज़ नहीं। हमारे डाक्टर साहब चाहें तो कोतवाल साहब और सारी कोतवाली को एक खूराक में अन्टाचित्त कर दें।

डाक्टर—चुप बदतमीज···बड़े बेहूदा हो तुम!

अहमद—हुजूर मैं जो झूठ कहता हूँ तो वही सज़ा जो चोर की··।

डाक्टर—चुप रहो। आज क्या हुआ···तुमने मारा क्यों······?

अहमद—आज सरकार···· इन दोनों ने मुझे छेड़ने की सलाह कर ली है। आज दोनों ने डाकिये को भी मिला लिया—उस तार वाले को।

डाक्टर—तार वाला!

अहमद—हाँ सरकार ! वह तार वाला ! बड़ा बदमाश है सरकार ! मैं उसका सिर फोड़ देता, लेकिन निकल गया ! सरकार हम खरी खोटी सुन लेंगे, लेकिन आपको······।

डाक्टर—तुम बकवाद किये जा रहे हो ! यह बताओ कि तुमने पुत्तू और छक्का को क्यों मारा ? जमाने भर की कहानी हम नहीं सुनना चाहते ।

अहमद—पुत्तू आया तो पहले उसने मुझे छेड़ा और लगा आपको कहने तो मैंने मारा ।

डाक्टर—क्या कहा ?

अहमद—सरकार आप की हँसी उड़ाने लगा······।

डाक्टर—(चिल्ला कर) क्या हँसी उड़ाने लगा ?

अहमद—आपको लेफ्टिनेन्ट कहने लगा···सरकार हँसी दिल्लगी बराबर वालों में होती है ।

डाक्टर – तो क्या हुआ ? लेफ्टिनेन्ट ही तो कहा ।

अहमद—कुछ हुआ ही नहीं ? साहब, इतनी बड़ी बात कह कर हँसी उड़ाता है······आपकी हँसी उड़ाये और··· ··।

डाक्टर—लेफ्टिनेन्ट कहने में हँसी उड़ाई ?

अहमद—ये तो सरकार···आपको लेफ्टिनेन्ट बना दिया ।

डाक्टर—तो फिर । लेफ्टिनेन्ट क्या बुरा होता है ?

अहमद—(परीशान होकर) सरकार, किसी भले आदमी को लेफ्टिनेन्ट कह दिया और कुछ हुआ भी नहीं । सुअर और कुत्ते का गोश्त खाते हैं लेफ्टिनेन्ट !

डाक्टर—अच्छा अब मत व्यर्थ बको! तुमने उसे बिना कसूर के मारा है, और तुम्हें सज़ा मिलेगी ·····।

अहमद—मैंने सरकार बिना कसूर के नहीं मारा। उसने आपको लेफ्टिनेन्ट कहा··· ··।

डाक्टर—बदतमीज······यह भी जानता है, लेफ्टिनेन्ट क्या होता है?

अहमद—जानते क्यों नहीं हैं?

डाक्टर—क्या होता है?

अहमद—गोरा पल्टन का अफसर होता है।

डाक्टर—सुन बेवकूफ, हम सचमुच लेफ्टिनेन्ट हो गये।

अहमद—हैं!

डाक्कर—हैं क्या?

अहमद—आप?

डाक्टर—हाँ हम।

अहमद—लेफ्टिनेन्ट!

डाक्टर—हाँ हम, लेफ्टिनेन्ट हो गये हैं।

अहमद—तो सरकार फिर अब··· ।

डाक्टर—अब क्या?

अहमद—छावनी में चल कर रहना होगा और सरकार गोरों से तो मेरी एक मिनट न बनेगी।

डाक्टर—छावनी में क्यों रहना होगा? यहीं रहेंगे।

अहमद—और कवायद परेड! सरकार आपसे कवायद परेड होगी? फिर···।

डाक्टर—कवायद परेड कुछ न करनी होगी। हमें कवायद परेड से, कुछ भी मतलब नहीं।

अहमद—सरकार यह कैसे हो सकता है? गोरा सलामी न उतारेगा आपकी।

डाक्टर—सलामी क्यों नहीं देगा? लेकिन कवायद परेड से मतलब नहीं।

अहमद—सरकार यह कैसे हो सकता है?

डाक्टर—अरे बेवकूफ, हम आनरेरी लेफ्टिनेन्ट हैं।

अहमद—अच्छा सरकार, यों कहिये, जैसे अपने छुट्टन लाल जी। यह खूब रही। बड़ा परेशान कर रक्खा है इक्केवालों ने भी सरकार। सिर्फ फजलू इक्केवान पर जुर्माना न कीजियेगा।

डाक्टर—क्या बकता है बेवकूफ?······छुट्टन लाल जी तो आनरेरी मजिस्ट्रेट हैं। हम लेफ्टिनेन्ट हैं। खैर, तुमको इससे मतलब नहीं। आज से कोई पूछे तो लेफ्टिनेन्ट साहब कहा करना।

अहमद—और डाक्टर साहब नहीं···।

डाक्टर—(कुछ सोच कर) हूँ! डाक्टर साहब!···हाँ डाक्टर साहब भी, लेकिन नहीं, अगर तुमसे हमें कोई पूछे, तो यही कहो कि लेफ्टिनेन्ट साहब बाहर गये हैं। लेकिन तुमने जो कोतवाल साहब के नौकर को मारा है, तो उससे जाकर माफी माँगो और उसे खुश करो। नहीं तो मुकदमा चल जायगा।

अहमद—सरकार, हमें मालूम तो था नहीं! हम तो यही समझे कि हमें छेड़ रहे हैं। फिर उन्हें भी तो मना कर दीजिये कि छेड़ा न करें!

डाक्टर—तुम अभी जाकर उसे मनालो, नहीं तो मुकदमा चल जायगा।

अहमद—जैसी सरकार की मरजी।

डाक्टर साहब अहमद को समझा-बुझा कर घर के भीतर गये।

यहाँ रंग ही दूसरा था। बीबी भीतर के कमरे में जाने के लिये कपड़े वगैरह ठीक कर रही थीं। खल्लू आया बावरचीखाने में संलग्न थीं। डाक्टर साहब बरामदे से होकर सीधे कमरे में पहुँचे और खुशी के मारे बीबी से बोले—तो भई, मिठाई खिलाओ। तार हाथ में लिये हुये थे।

बीबी, जो बेहद काम में लगी हुई थीं, चौंक पड़ीं। डाक्टर साहब के हाथ में तो तार, चेहरे पर लेफ्टिनेन्टी की मुसुकुराहट और उनका मिठाई खिलाओ कहना! बेगम साहब के ऊपर मानों खुशी की बिजली गिरी। मारे खुशी के साँस न समाई और सहसा खुशी की एक अरक्षित हालत में मुँह से निकल पड़ा—

"ही···हैं···छुज···छुज··· छुज···जो··· जो···जो···छुज··· लड़ लड़···ऐ खल्लू आया···खल्लू आया री···।"

इधर डाक्टर साहब ने नाराज होकर कहा—क्या छुज, छुज लगा रखी है?

"खल्लू आया, तार आ गया।" यह कह कर कमरे से बरामदे में आई और फिर डाक्टर साहब की तरफ लौटी। "ऐ तुम्हें हमारी कसम···कब हुआ लड़का···तुम तार तो पढ़ो··· ।"

"हैं हैं, यह तुम्हें क्या हो गया है? खैरियत तो है! तुम क्या बकती हो?"

"छज्जू भइया के लड़का हुआ है।"

"कैसा लड़का···क्या बकती हो?"

"ओ न···तुम मजाक करते हो! यह तार जो आया है।"

इतने में खल्लू आपा भी तेजी से पहुँचीं, यह कहती हुई—"ऐ मैं कहती थी न···मैं कहती थी न···लड़का होगा, लड़का ही· ।"

"कैसा लड़का···क्या कह रही हो···यह तार तो और है··· ।"

"देखो खल्लू आपा···परेशान कर रहे हैं, मजाक कर रहे हैं! अभी अभी मिठाई माँग रहे थे!"

खल्लू आपा बोली—"भला मिठाई क्यों न लेंगे? कायदे से तो कमरबन्ध साफा मय अँगरखा के बहनोई का हक होता है। मैं अँगरखा दूँगी···तुम मुझसे लो अँगरखा··· ।"

"यह क्या वाहियात है··कैसा लड़का···क्या बकती हो?"

शीघ्र ही गलतफहमी दूर हो गई। यह छज्जू भैया का बिलकुल तार नहीं है। यह तो दूसरा ही तार है। शिमले से आया है कि मैं लेफ्टिनेन्ट हो गया हूँ!

"हैं!" आँखें दोनों की फटी की फटी रह गईं। "लेफ्टिनेन्ट"—खल्लू आपा ने कहा—"लेफ्टिनेन्ट! कौन हो गया?"

"मैं हो गया।"

"लेफ्टिनेन्ट! बेगम साहब ने कहा—इससे क्या मतलब? क्या कह रहे हो?"

"कह यह रहा हूँ कि सरकार की तरफ से मैं लेफ्टिनेन्ट हो गया हूँ। आखिर इसमें सन्देह क्यों है?"

दोनों चुप होकर एक दूसरे को देखती हैं।

"आखिर चुप क्यों हो ? बात क्या है ? यह सच बात है कि मैं लेफ्टिनेन्ट हो गया हूँ !"

"ऐ, जोभी जी ! तुम नहीं कब थे ! हमने हमेशा लेफ्टिनेन्ट ही देखा तुम्हें ।"

"क्या···क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि तुम जो श्रोसा रहे हो लेफ्टिनेन्ट, लेफ्टिनेन्ट, तो भइया बताओ, कि तुम लेफ्टिनेन्ट थे कब नहीं ! अब तो समझो !"

"मैं तो नहीं था ।"

"नहीं होगे···भइया माफ करना । इतना तो मैं भी कहूँगी कि तुम उस समय तो अच्छे भी लगते, जब हमारी बहन ने तुमसे चूँ भी किया होता ! किसी काम में 'ना' की होती···ऐ भइया कभी उलट कर बात की होती । कभी लड़ी होती, या जुबान चलाये होती या खिदमत में कोर कसर ··· ।"

"अरे, अरे, तो मैं कब कहता हूँ !"

"तो इस गरीब दुखिया पर लेफ्टिनेन्टी बघारते हुये तुम कुछ अच्छे नहीं लगते ।"

"लाहौल बिलाकूह···कैसी आफत में जान है । अरे साहब, यह सरकारी ओहदा होता है और यह ओहदा मुझे सरकार से मिला है । यह तार इसीलिये आया है ।"

"और हमारे छज्जू बेचारे का झूठ ही निकला । लड़का-वड़का कुछ नहीं ।"

"कैसा लड़का···किसने कह दिया ! यह तार लो ! न मानो किसी दूसरे से पढ़वालो ।"

"इस तार में क्या लिखा है ?"

"यह लिखा है कि तुम लेफ्टिनेन्ट हो गये।"

"फिर वही मुर्गे की एक टाँग……।"

"अरे खल्लू आया यह तुम्हें क्या हुआ है……।"

"ऐ, चल खल्लू बन्दी ! तुझे क्या ? तेरी तो वह कहावत है—काम न धाम, दही में मूसल।"……वह ठहरे मियाँ और वह ठहरी उनकी बीबी। लेफ्टिनेन्ट नहीं, चाहे जो बने ! तू बन्दी कौन ? तुझ मरदी को क्या ?……तू चल अपनी हँडिया देख……बन्दी तो यह चली। भइया, ये तुम्हारी बीबी है। बघारो खूब लेफ्टिनेन्टी…अरे हाँ नहीं तो……।"

"अरे, अरे, सुनो तो……अरे सुनो तो खल्लू आया……तुम्हें हमारी कसम……।"

"क्या व्यर्थ की बातें करते हो ?"

"अरे फिर वही, आखिर क्यों नहीं यकीन करते ?"

"क्या यकीन करूँ ?"

"कि मैं लेफ्टिनेन्ट हो गया ?"

"देखो भइया, तुम जो समझते हो, कि बिलकुल मूर्ख हूँ तो निश्चय ….पर लेफ्टिनेन्टी कहानी को मैं भी जानती हूँ। दुनिया मैंने भी देखी है।"

"क्या जानती हो ?"

"सब जानती हूँ !"

"लेफ्टिनेन्ट क्या होता है ? जानती हो ?"

"हाँ, जानती हूँ।"

"जानती हो ·····कह दिया, कि खाक···अच्छा बताओ, तुम क्या जानो, भला ?"

"मैं क्या जानूँ···यह लो···मैं नहीं जानूँगी, लेफ्टिनेन्टी के बारे में तो कौन जानेगा···लगा रक्खी है लेफ्टिनेन्ट, लेफ्टिनेन्ट···यह मूँछ दाढ़ी तो मूँड़ो पहले।"

"मूँछ-दाढ़ी।"

"यह मूँछ दाढ़ी लेफ्टिनेन्ट के कब होती है ?···मुड़वाओ न।"

"क्यों, मुँडवाऊँ ?"

"और लेफ्टिनेन्ट बन जाओगे ?"

"इससे क्या होता है ?"

"यह लो। लेफ्टिनेन्ट को मूँछ दाढ़ी रखने का हुक्म कहाँ है ? तीन खून उसे माफ होते हैं। गोरों का बड़ा कप्तान होता है···मैं सब जानती हूँ।"

"क्या बकती हो ? तीन खून माफ ! बिलकुल गलत ! जाने किसने तुम से उड़ा दी है। खून भी किसी को माफ हो सकते हैं ? बिलकुल गलत।"

"यह लो, लेफ्टिनेन्ट बनने चले हैं, अभी इतना भी नहीं जानते।"

"माफ होते हैं ! अभी कल ही की बात है, दीना का ससुर !"

"अरे, वही दीना (डाक्टरनी से) !"

"अरे, वह कल्लू का दामाद न !"

"अरे, हाँ वही, कल्लू निगोड़ा ! लेफ्टिनेंट के यहाँ कुलियों में जो काम करता था। मार डाला लेफ्टिनेंट ने !

"कैसे मार डाला ?"

"लात जो मारा, तो कलेजा फट गया। मर गया निगोड़ा तड़प के। फिर थाना कोतवाली सब कुछ तो थी। लेकिन कह दिया गया कि लेफ्टिनेन्ट के तीन खून माफ हैं। कुछ भी न हुआ लेफ्टिनेंट का।"

"उसकी तिल्ली फट गई होगी। उसमें खून की सजा थोड़े ही मिलती है।"

"तो फिर क्या है ? तुम भी लेफ्टिनेंट हो गये······फाड़ देना किसी की तिल्ली। तुम्हें भी कोई कुछ नहीं कहेगा। तुम्हारी क्या बात है ! तुम्हें तो चौदह खून माफ हैं। दिन रात यों ही सुइयाँ कोंच-कोंच के मारते हो।······डाक्टर हो न,······अब लेफ्टिनेंट हो गये······ भैया मुबारक हो।"

"बड़े अफसोस की बात है, कि यह खुशी प्रगट करने का समय था, जो कि मैं लेफ्टिनेंट हुआ। और घर में यह बरताव हो रहा है। अभी कुछ और होता तो घर में सभी प्रसन्न होते······।"

"सुना भैया, खुशी तो उसे होती है, जिसके मन में सुख होता है। कलेजा ठंडा होता है। इस घर से तो खुशी उड़ गई ?"

"जबर्दस्ती !"

"जबर्दस्ती क्या ! देख लो हमारी बहन को। आज शादी हुये पन्द्रह साल हो गये, पर गोद खाली। जिस घर में औलाद नहीं, वहाँ खुशी कैसी ?"

"लाहौल बिलाकूह ! कैसी वाहियात बातें हो रही हैं !"

"अच्छा फिर क्या मतलब है······खल्लू बन्दी क्या करे······ नाचे, कि थिरके······कि कूदे ! आखिर क्या करे ? जो कहो, उसे

यह बन्दी करने को तैयार है। मनाओ न खुशियाँ, किसी ने मना किया है। वह कहावत भी किसी ने कही है—बोल बन्दा किसका······ कि तेरा—लो हम खुश तो हमारा भगवान खुश।"

"बुरा किया मैंने ! जो आकर घर में कहा !"

इतने में अहमद दरवाजे से पुकारता है, कि डाक ले जाओ। जुम्मन दौड़ा हुआ गया, और कुछ चिट्ठियाँ लाया। खल्लू आया चली गई। डाक्टर साहब ने डाक ली। कई मासिक पत्र और कई दवाइयों की नोटिसें थीं। एक चिट्ठी भी थी।

डाक्टरनी बोलीं—कोई चिट्ठी भी है?"

"है तो ······यह चिट्ठी !"

डाक्टर साहब ने चिट्ठी पढ़ी, और चहकते हुये बोले—लो मुबारक हो ! लड़का लड़का चीख रही थीं। छज्जू भइया के यहाँ चौदह तारीख को दो लड़कियाँ हुई हैं?"

"जुड़वाँ।"

"हाँ—माँ और बच्चियाँ दोनों खैरियत से हैं······।"

डाक्टरनी कुछ कटी हुई आवाज से—"लड़कियाँ······दो—ऐ खल्लू आया······।"

"झाड़ू फिर जाय खल्लू आया की सूरत पर······क्या है !" बावरचीखाने से खल्लू आया ने झाँककर कहा।

"छज्जू भैया की चिट्ठी आई है। दो लड़कियाँ हुई हैं······"

"ऐं !"

डाक्टरनी—"जुड़वाँ लड़कियाँ हुई हैं··· ·।"

खल्लू आया दौड़ी हुई आईं और उसी तरह बरामदे के पास

रुक गईं, जैसे शंटिङ्ग के लिये जाते हुये इंजन को लाल झंडी दिखा दो।······बोलीं—लड़कियाँ··· दो······कब······?"

"चौदह तारीख की रात को······माँ और बच्चियाँ दोनों खैरियत से हैं।"

खल्लू आया चुप रहीं।

"अरे, तुम तो चुप हो गईं"—डाक्टर बोले।

"झाड़ू फिर जाये लड़कियों की सूरत पर······उड़ जायें ये लड़कियाँ······लड़कियाँ! लड़कियाँ!! जिधर देखो, आफत जोत रक्खी है, भगवान, भगवान करके फजलू के यहाँ दिन गिने। क्या हुआ?··· लड़की···। ऐनुद्दीन के यहाँ अल्लाह ने खैरियत से पूरे किये कि यह लो लड़की···मसीता के यहाँ भी लड़की—और यहाँ भी लड़की··· लड़कियाँ न होगईं,···इलाही तोबा···बेचारा छुज्जू···।"

"भई वाह, लड़कियाँ ऐसी बुरी होगईं?"

"यह लो! भला लड़कियाँ क्यों बुरी होने लगीं···झाड़ू दें, चूल्हा फूँकें, तकदीर को रोयें, और लड़के तुम्हारी तरह बने फिरे लेफ्टिनेन्ट।"

"मुझे तो छुज्जू बेचारे पर तरस आता है···छुज छुज···।"

"अरे तो क्या हुआ?"

"कुछ हुआ ही नहीं···लो···वह जो किसी ने कहा है · भाला पर भाला! घाव पर घाव! छुज्जू बन्दे···शाबाश है। तेरी जितनी तारीफ की जाय, थोड़ी है। तुमने घाव पर घाव खाये, पर उफ जो भी हो।"

"कैसे घाव?"

"घाव! अरे घाव नहीं तो क्या?···लड़का हुआ···एक हुआ

चाँद-सा, वह मर गया। दूसरा हुआ···शेर के बच्चे-सा, वह भी मर गया। तीसरी वह लड़की आई, जो अपने साथ ही साथ माँ को भी लेती गई। शाबाश है कुज्जू को! मटर सी दुलहिन और कैसी पहाड़ सी लाश थी—लो साहब, घर का सफाया ही होगया·····।"

फिर उन्होंने बरसों शादी क्यों नहीं की?

"और तुमने की तो कौन सी अक्लमन्दी की···अबज्जाद तकदीर में होती है तो शादी भी होती है···अब ये आईं···नई दुलहिन····· मरने वाली की जूती बराबर नहीं और दिमाग ले लो आसमान पर··· निगोड़ी कहीं की···खैर साहब, हम समझे थे, कि चलो जैसी भी बुरी भली हैं ठीक है, कि आज सुन लो एक छोड़ दो···अरे वाहरे मालिक, मैं तो तुम्हारी खुदाई को मानती हूँ···और फिर भैया मैं कौन? ये खड़ी हैं! नाखुश हो भगवान ने एक साथ ही दो-दो भतीजियों की फूफी बना दिया!···और फिर मैं अपना हँड़िया चूल्हा देखूँ···खाक पड़ जाये, आलू लाया है कि पत्थर!···गलते ही नहीं!"

इतना ही कह पाया है, कि सामने बावरचीखाने से रहीमन बुआ जोर से चिल्लाईं। जुम्मन जोर से भागा, और रहीमन उसके पीछे। उन्होंने दिया एक चिमटा घुमा कर। वह एक चीज में उलझ कर गिरा और फिर उठकर भागा, रहीमन बुआ चिल्लाईं—ठहर तो जा मरदुये···तेरा कुरमा बना कर छोड़। हैजा ले जाय इसे···देखती हो बेगम साहबा, गँवार ने चिमटा गरम करके मेरे पैर में लगा दिया··· उसे तो कोई कहने ही वाला नहीं है।···मुआ बना फिरता है लेफ्टिनेन्ट···।

देखो यह क्या वाहियात है ?—डाक्टर ने कहा—मना कर दो, इनको, लेफ्टिनेन्ट क्यों कहती हैं ?

"हमसे काम नहीं होता···देखती हो बीवी···पहले तो लकड़ियाँ घसीट-घसीट कर चूल्हा ठंडा किये देता था, फिर मेरा पैर जला दिया।"

"बुलाओ जुम्मन को ?"

वह अपने आप ही आया, और दरवाजे के पास रुक गया! रहीमन बुआ झपटीं—"ठहर तो जा मूँड़ीकाटे !"

खल्लू आया ने पुकारा—जुम्मन, जुम्मन !!

"वह लेफ्टिनेन्ट बने फिरते हैं · करते फिरें शरारतें बच्चा···!

"फिर वही—" डाक्टर ने बिगड़ कर कहा—मना कर दो उनको !

खल्लू आया ने रहीमन बुआ से कहा—ऐ बुआ लेफ्टिनेन्ट ?

लेफ्टिनेन्ट न कहूँ···?"

"हाँ !"

"और वह मेरे पैर चला दे·· लेफ्टिनेन्ट तो है ही वह···।"

खल्लू आया—ऐ बुआ, हमारे भाई लेफ्टिनेन्ट होगये हैं··· ।

"कौन ?"

डाक्टर साहब स्वयं बरामदे से उतर कर नरमी से बोले—'ऐ बात यह है, कि मैं लेफ्टिनेन्ट होगया हूँ··।

"तुम ?"

"हाँ······सरकार से खिताब मिली है······अब इस छोकरे को मत कहो······।"

(मुँह फाड़कर) "हैं······इसे कुछ न कहूँ·····और यह मुई का बेटा मेरा पैर दाग दे।"

"लेफ्टिनेन्ट मत कहो इसे······तुम समझी नहीं बुआ ·····।"

"मैं सब समझ गई······लेफ्टिनेन्ट नहीं तो इस मुये को चहेता और प्यारा कहूँगी······।"

(बात काटकर) "व्यर्थ बकती हो ! सुनो तो······।"

"मैं स्वयं लेफ्टिनेन्ट हो गया हूँ। और तुम इस छोकरे को लेफ्टिनेन्ट कहो······यह उचित नहीं है !"

"और यह उचित है, कि वह मरदूद मेरा पैर दाम दे··· ··और मैं कुछ न कहूँ······।"

अरे मैं यह कब कहता हूँ ? मेरा मतलब तो यह है, कि मैं जो लेफ्टिनेन्ट हो गया हूँ। सरकार ने मुझे लेफ्टिनेन्ट बना दिया।"

"तुम मुझ निगोड़ी से क्या कहते हो ? एक तुम क्या; यहाँ जिसे देखो, वही लेफ्टिनेन्ट बना फिरता है। अहमद को देख लो, मजाल क्या जो सूखी लड़कियाँ लायें। गीली लकड़ियाँ फूँकते-फूँकते अंधी हुई जाती हूँ, पर नहीं मानता······वह भिश्ती है, कितनी चिल्लाती हूँ, पर वह चूल्हे के सामने तालाब बना जाता है, और एक नहीं सुनता। ···वह तो वही है, उस मुई भंगिन को देखो। आज तीन दिन से चिल्ला रही हूँ, पर शलजम के छिलके पड़े सड़ रहे हैं। मजाल क्या जो वह सुने······तू मियाँ मेरे ! भंगिन क्या······भिश्ती क्या··· अहमद क्या······जुम्मन क्या, मेरे लिये सभी लेफ्टिनेन्ट हैं। अब तुम भी आये मुझी को डाँटने·····उलटा चोर कोतवाल को डाँटे··· उस सँपोले को तो कुछ नहीं, जो मेरा पैर जला गया। उल्टे मुझी पर बरस पड़े···तो मियाँ, तुम तो घर के मालिक ठहरे······।"

"क्या बकवास लगा रखी है······।"

"मियाँ बकवास नहीं······। इस घर से अब दूर ही रहना चाहिये, वह मुआ, सँपोला मेरा पैर जलाकर हू-हू करता फिरे, और तुम उसे डाँटने मारने से तो रहे, आये वहाँ से कहने, कि मैं लेफ्टिनेन्ट ··हूँ।"

"लाहौल विलाकूह ! अरे, इसको कोई समझाओ।"

"नहीं नहीं, सुन लो आज···तो फिर मेरा कहना है कि उसे मारने के बजाय, जो तुम कहो, कि लेफ्टिनेन्ट हूँ तो मियाँ फिर ये लोग मुझे क्यों चैन लेने देंगे······मारने से रहे, उल्टी उसकी इस तरह तरफदारी की जाय······ना बाबा, आज चालिस बरस होने को आये कि इसी घर में हूँ पर यह रङ्ग कभी न देखा······।

"इनको समझाओ खल्लू आया।"

"समझाऊँ क्या······टाँग बराबर छोकरे ने मेरा जीना मुश्किल कर दिया, और तुम करो उसकी तरफदारी······अच्छा बाबा······ जो जी में आये, करो ···मुझे मौत भी नहीं आती निगोड़ी··· (चिल्ला कर)······ले घर में घिस······तो क्या, अब तो घर का घर लेफ्टिनेन्ट होगया····· खाक पड़े ऐसे जीने पर ····।" बड़-बड़ती बावरची खाने में चली गई।

डाक्टर ने कहा—"यह तो बड़ी वाहियात बात है। खल्लू आया उनको अच्छी तरह समझाओ। स्वयं सोचो, कि भंगी और भिश्ती को लेफ्टिनेन्ट कहना कहाँ तक ठीक है ?"

"ऐ ठीक तो कहती है वेचारी······अब समझेगी केवल जाकर कब्र में। तुम्हें जो आज फुरसत है। निगोड़े मरीज भी मर गये सारे। खाने को कैसा बेवक्त हुआ जाता है······। भैया तुम जानो, तुम्हारा काम। मुझे तो बख्शो······।"

यह कह कर खल्लू आया भी चल दीं बावरची खाने की तरफ और डाक्टर साहब बेगम साहिबा के सहित रह गये। दोनों कमरे में जाकर निश्चिन्तता से बैठे। डाक्टर साहब ने शिकायत के स्वर में कहा—"बड़े अफसोस की बात है, कि तुम बिलकुल खुश नहीं हो।"

"तुम सोचते हो छोकड़ियाँ होने से मैं खुश नहीं हूँ। दो छोड़ चार हों, मेरी बला से!"

"अरे लड़कियों की बात नहीं! क्या आदमी हो?"

"फिर······।"

"मेरे लेफ्टिनेन्ट होने पर।"

"लेफ्टिनेन्ट होने पर!"

"और क्या? यह कोई साधारण बात है?······भला हर कोई लेफ्टिनेंट हो सकता है······! तुमको तो बहुत खुश होना चाहिये था। जब तुम्हीं खुश न होगी, तो तुम्हीं स्वयं सोचो, मेरी खुशी कहाँ रह गई?"

"मैं तो यह जानती हूँ, कि जिसमें तुम खुश, उसमें हम खुश।"

"फिर क्यों खुश नहीं हुईं।"

"अच्छा लो, हुई।"

"हुई!"

"हाँ, फिर और क्या? जो तुम कहो, वह करूँ······!!

"हैं, लीजिये मैं ऐसी बनावटी खुशी से बाज आया। आप कुछ भी न करें।"

"यह लो, यह लो, तुम तो खफा हो गये।"

"मैं क्यों खफा होता ! हाँ, दुख मुझे अवश्य है, कि तुम्हें खुशी नहीं हुई ।"

"ऐ, मुझे डालो तुम चूल्हे में ।"

इतने में खल्लू आया कमरे में आती हुईं बोलीं—"यह लो खाना खालो तुम······गरम गरम तहरी······मैंने कहा ठंडी हो जायगी !"

और साथ ही पीछे बुआ रहीमन आती हैं, बड़बड़ाती हैं, खाने का बरतन लिये हुये—खाक पड़े······दुनिया को मौत आ रही है, पर आती है नहीं तो······रहीमन को·········।"

रहीमन ने भोजन के बरतन रक्खे तख्त पर और डाक्टर साहब ने कहा—"बुआ तुम नाराज न हो······खल्लू आया······जुम्मन की खूब खबर लेना !"

"और हाँ बुआ······सुनो तो······मैंने जो तुमसे कहा था, कि तुम उसे लेफ्टिनेन्ट न कहना तो इसलिए, कि जब मैं लेफ्टिनेन्ट हो गया तो छोकरे को लेफ्टिनेन्ट कहना तो स्वयं तुम्हें भी बुरा लगेगा !

रहीमन बुआ तख्त पर चमचे पटककर बोलीं—ऐ मियाँ, खुदा तुम्हें सलामत रक्खे ! यहाँ तो यहीं चख-चख है······लगी हुई है निगोड़ी दम के साथ······और इस रहीमन् बन्दी को न चैन है, न मौत··· दिन है तो······रात है या······चख···चख··· · चल···चख··· आज तुम लेफ्टिनेन्ट···कह तो चुकी मियाँ······घर का घर लेफ्टिनेंट सब लेफ्टिनेन्ट !···खुदा की शान है, यह टाँग बराबर छोकरा मेरे सिर पर चढ़ कर मूते और जुबान खोलूँ तो लेफ्निनेन्टी बीच में ! और देख लो उसे अच्छी तरह, अपने डन्डा ऐसा पड़ा है, कि घूम रहा है

.....और कहता फिर रहा है...हू, हू, हू, !...और यहाँ वह कहावत कि, मेरे दाँव को सब लेफ्टिनेन्ट... ...।"

बुआ रहीमन यह कहती हुई अबाउटटर्न हो गईं। डाक्टर साहब ने कहा—"अरे खल्लू आया, तुमने भी न समझाया।"

"मेरे दिमाग में खुद भूसा भरा है"—खल्लू आया ने कहा।

"तुम तहरी खाओ—ठंडी हुई जाती है।"

डाक्टर साहब—"वाह भी औरतां बबायद साख्त" कहते हुये खाना खाने के लिए बैठे। खल्लू आया भी बैठ गई। मजेदार खाना। थोड़ी देर के लिये लेफ्टिनेन्टी भूल गये। खल्लू आया बोलीं—"भैय्या तहरी कैसी है?"

"बहुत अच्छी है, गरम-गरम।"

गरम-गरम कहा था, कि जैसे तूफान आ गया। आईं उधर से चिल्लाती हुई रहीमन बुआ और दूसरी तरफ बाहर से खिड़की से अहमद की आवाज आई।

"अन्धेर है या नहीं.........मेरी कोई सुनवाई नहीं।" और कमरे में रहीमन बुआ ने प्रवेश करते हुये कहा—"मैं सिर पीट कर निकल जाऊँगी घर से...।"

"खैरियत तो है!"—खल्लू आया ने कहा।

"क्या हुआ?"—डाक्टर साहब बोले।

इतमें में खिड़की की तरफ से अहमद बोला—हजार सौ बातें सुनाई हैं और कहती हैं, कि अब जो आपको लेफ्टिनेन्ट कहा, तो मुँह तोड़ दूँगी, मुँह तोड़ दूँगी!"

"नाहक मुँह तोड़ देगी...!"

रहीमन बुआ बीच में बोलीं—लो···और सुनो···सूप तो सूप चलनी भी बोले, जिसमें बहत्तर छेद···हुआ गुलमरा······!

"साहब मनाकर दो इनको······।

"यह क्या वाहियात है······।"

"मुझे यह धींगड़े का धींगड़ा भी लगा छेड़ने···।"

"अरे क्यों छेड़ते हो · अहमद···।"

"सरकार, मैंने तो कुछ नहीं छेड़ा। मैं तो सिर्फ इतना गुनहगार कि मैंने इनसे पूछा कि रहीमन बुआ, लेफ्टिनेन्ट साहब क्या कर रहे हैं! इन्होंने कहा कि तेरी लाश पीट रहे हैं और अब कहती हैं कि फिर जो लेफ्टिनेन्ट कहा तो जूती से मुँह तोड़ दूँगी।"

"तोड़ नहीं दूँगी···तो क्या घी शक्कर से भरूँगी···सुन लो मियाँ कान खोल कर, मैं तुम्हारी सह लूँगी···पर इस गुलमरे को मारूँगी जूती······।"

"रहीमन बुआ, यह तुमको क्या हो गया···एक तो स्वयं नहीं समझतीं और दूसरों से लड़ती हो···भाई, इनको समझाओ···।"

"मुझी को समझा डालना···अरे कम्बख्त तुझे मौत भी नहीं आती···रहीमन निगोड़ी···।"

रहीमन बुआ भन्नाई हुई कहती चली गई—"खाक पड़े ऐसी जिन्दगी पर।"

डाक्टर साहब ने अहमद से कहा—तुम बकने दो इसे!

अहमद चला गया। और अब खल्लू बी ने कहा—"भैया एक बात कहूँ!"

"वह क्या! कहो।"

"तुम्हारे होश-हवास जा रहें हैं उस लेफ्टिनेन्टी से जो······या भगवान, यह लेफ्टिनेन्टी न हुई मुई वह होगई······।"

"क्यों ?"

"तुम्हारा तो वही हाल हुआ, कि कोई थे फत्त। एक दिन फत्त बीबी की छाती पर सवार हुये कि "कहो हमें फतह बहादुर खाँ।"

डाक्टर साहब ने कहकहा लगाया। और हँस कर पूछा—फिर क्या कहा बीबी ने ?

"बीबी बेचारी क्या कहती ?···बोल बन्दा किसका, कि तेरा··· बीबी का क्या है ? उसी दिन और उसी समय किसी ने झट पुकारा, फत्तू। तो मिया, यह बताओ कि दूसरे लोग तुम्हें क्या कहेंगे ?"

"दूसरे लोग भी लेफ्टिनेन्ट कहेंगे ?"

"अच्छा मान लिया मैंने···पर कुछ तनख्वाह-वनख्वाह।"

"तनख्वाह तो कुछ नहीं।"

"ऐ दैया (चौंक कर बोलीं) कुछ भी नहीं। अरे इस पर यह हुल्लड़।"

"देखती भी हो, इज्जत कितनी है। ओहदा कितना बड़ा है···।"

"खाली इज्जत को लेकर क्या कोई चाटे ! पैसा कौड़ी एक न दे और नाम दारोगा धर दे···वही तुम्हारा हाल हुआ।"

"आया, तुम जानती नहीं हो ! ओहदा वहुत बड़ा होता है।"

"खाली बखूली।"

"यही क्या कम है ?"

"होगा भैया !"

"मुझे तो यह अफसोस है कि आपको प्रसन्न होना चाहिये था! मुझे शिकायत तो इस बात की है।"

"अच्छी तुम्हारी शिकायत है।···वाह भैया वाह···पूछो कोई तनख्वाह···कि नहीं···पूछो कोई जर जागीर···कि नहीं···तो भैया हम तो औरतें हैं। तनख्वाह लाते···कि जागीर मिलती या घर में कोई दौलत आती तो हमें खुशी न होती···यों करने को शिकायत तो कर लो··· ।"

"अरे, खूब याद आया···लो आज आती है दौलत भी! दो सौ रुपये।"

डाक्टर—नकद लो।···लेकिन एक शर्त है। तुम्हें भी हमें लेफ्टिनेन्ट··· ।

डाक्टरनी—आँ···हाँ मैं जरूर कहूँगी···कुछ हँस कर बोलीं।

खल्लू—हम कहेंगी··हम कहेंगी लेफ्टिनेन्ट, एक छोड़ दो बार! लेकिन शर्त हमारी यही है कि ये दो सौ रुपये आयेंगे तो फिर हिसाब मत पूछना।

डाक्टर—मंजूर···बिलकुल मंजूर।

"तो बस हमें भी मजूर। हम एक बार नहीं सौ बार लेफ्टि···।"

"अरे कहाँ से आयेंगे"—डाक्टरनी बोलीं।

"आज शाम को राघो जी की उँगुली का आपरेशन उन्हीं के घर पर होगा।"

"अरे इतनी-सी उँगुलियाँ के कोई दो सौ रुपये दे देगा।"—खल्लू आया बोलीं।

"अमीर आदमी हैं। एक दो सौ क्या, न जाने कितना रुपया

खर्च होगा। बड़े अस्पताल से बड़े आपरेशन के सभी सामान, कम्पाउंडर, बेहोशी का सामान और नर्सें आयेंगी। तुम क्या जानो, रईसों के ठाट हैं।"

"बेहोश कर दोगे।"—डाक्टरनी ने कहा।

"नहीं जी, कोकिन लगा कर सुन्न कर दूँगा। बात का बतंगड़ न बनायें तो रईस लोग हमारा इलाज क्यों करें। अपने कम्पाउण्डर को फीस अलग मिलेगी।"

"तो फिर तुम कब जाओगे?"

"मैं ऐन मौके पर जाऊँगा। जब सब सामान तैयार हो जायगा, तो आदमी मुझे बुलाने आयेगा। पहले से पहुँचने में डाक्टर की शान नहीं रहती।"

"रुपए आज ही मिल जायँगे!"

"वह तो दिया नकद...नकद...।"

"लो भैया, लेफ्टिनेन्टी मुबारक हो...। मुबारक इसे कहते हैं...खा चुके खाना...लाओ खाना बढ़ाऊँ। इस बुढ़िया को तो यही करना है!"

"लो, ले जाओ!"

खाने के बाद डाक्टर साहब पड़ रहे। बेगम अपने कमरे की तरफ चली गईं, लेकिन डाक्टर को चैन कहाँ? एक रोगी के यहाँ गये, जो बेचारा कोशिश करने पर भी मर गया। पुराना मिलने वाला था। आकर पड़ रहे और इसी प्रतीक्षा में शाम हो गई कि राघो जी के यहाँ से आपरेशन के लिये बुलाने कोई अब तक न आया। इसी सोच में थे कि उठकर आँगन में आये। बीबी पलँग

पर बैठी थीं और खल्लू आया, बावरची खाने में थीं। आते ही बीबी को रोगी के मर जाने की सूचना दी।

"रहमत खाँ मर गये बेचारे···।"

"अरे—सच · कब !"

"वहीं तो गया था। दोपहर को··तीन इन्जेक्शन दिये, लेकिन बेकार ··।"

"तो यों क्यों नहीं कहते कि मार आये ··उसे भी···।"

"पागल हुई हो !"

"ओ खल्लू आया—खल्लू आया···अरे, वह चल बसे बेचारे··· रहमत खाँ···।"

"अरे ··क्या सच···दूर से चीखीं और दौड़ी हुई आईं···चल चल···कब···क्या हुआ ?"

हाथ उठा कर डाक्टर साहब की तरफ बताया।—"खड़े हैं न, पूछ लो, लाख बार कहा कि तुम रहने दो···उस बेचारे को रहने दो···सुई मत भोंकना·· गरम दवायें न देना · पर वे तो नहीं··· क्यों ?···मैंने जो कहा था···मेरी जिद · ।"

"पागल हुई हो तुम तो ·····।"

"अरे मुझे भी तो बताओ·· सहसा क्या हो गया निगोड़े को···।"

"होता क्या······दिल में दर्द पैदा हुआ था। जब तक पहुँचू खतम····· ।"

"और कोई दवा नहीं दी !"

"दी क्यों नहीं ?"

"कौन सी दवा दी !"

"इन्जेकशन।"

"ऐ है"—चौंककर खल्लू उछल सी पड़ीं। और डाक्टरनी के मुँह से निकला—सुई भोंक दी......।

खल्लू बोलीं—दिल में ....।

"दिल में क्यों भोंकता......भगवान ही बचाये तुम लोगों से।"

"दिल में ही तो उसके दर्द हो रहा था ....फिर कहीं और दे दिया......।"

"हाथ में दिया......।"

डाक्टरनी बोलीं—यह लो ! कहो आया कैसी रही......बेमौत मरा निगोड़ा ! नज्जू के लड़के का सा ही हाल हुआ......बिलकुल नज्जू के लड़के का सा हाल !

डाक्टर.... हूँ, हूँ,......नज्जू के लड़के का सा .. ।"

"अरे भूल गये इतनी जल्दी ! पीठ में दर्द पैदा हुआ था निगोड़े के और तुमने दो सुइयाँ उसकी रान में भोंक दी ! "पीठ का दर्द ज्यों का त्यों और रान का दर्द घाटे में।"

"और मैं हाँ हाँ करती रह गई"—खल्लू आया बोलीं।

"तुम क्या जानो ? लाहौल बिला कूह !"

"हम क्या जानें ? अरे भैया दिल में निगोड़े के दर्द हुआ, और हाथ में सुई लगाई। वही हाल हुआ "मारूँ घुटना, फूटे आँख...... अरे किसी राह चलते को पकड़कर गोद दिया होता......वाहरे इलाज.... ।"

डाक्टर—तुम जानती नहीं हो। क्या कहें ? हाथ का इन्जेक्शन खून में मिलकर शीघ्र पहुँच जाता है !"

"वाह, खूब पहुँचा !"

"रगों में होकर पहुँच जाता है।"

"अरे भैया, हम गरीब क्या जानें ! पर रगें हमारे भी हैं, सारे बदन में फैली हैं ! तुमने सुई से दवा दी, न जाने किधर पहुँची ! क्या पता, पैरों में पहुँची······

डाक्टरनी—और निगोड़ा दिल बिना दवाई के दुखता ही रह गया। मर गया बेचारा तड़पकर। दर्द दिल में और दवा पहुँची पैरों में।

डाक्टर—पैरों से फिर वही दवा दिल की तरफ आ जाती है।

खल्लू—लो और सुनो ! यह तो वही हुआ—"कल्लू भैया मेरठ गये हापड़ से उल्टे लौट पड़े !" खून भी मुआ दीवाना है ! पैर का खून पलट कर दिल में आ गया······!"

डाक्टरनी—"अरे होगा ! बिना मौत के मर गया दुखिया !"

खल्लू—"बिना मौत के······बिना मौत के······साहब मेरे बिना मौत के······।"

डाक्टरनी—"इस मौके पर लखलखा सुँघाकर वेदमुश्क का अर्क देते······।"

खल्लू—' ऐ है ! निगोड़ा जी जाता।

डाक्टरनी—यह तीसरा रोगी है।······तीसरा है, जो उसी तरह मर गया। कितना कहा, कि लखलखा और वेदमुश्क रक्खो ! हकीम चचा रखते थे······।"

डाक्टर—"वाहरे हकीम चचा तुम्हारे······।"

डाक्टरनी—वह लखलखा तो मैंने हकीम चचा की नोटबुक से

निकाल कर रखवाया। वेदमुश्क की शीशी हैन्ड वेग से निकाल कर फेंकवा दी।...।...भला पड़ी रहती.....!

खल्लू—तो आज काम आती।

डाक्टरनी—और फिर कितना कितना कहा, कि इस वेचारे को रहने दो। इससे चार पैसे की स्थायी आमदनी है!

डाक्टर—क्या रहने दो?

डाक्टरनी—अरे साहब, गरम दवाइयाँ दीं और बदपरहेजी कराई।

डाक्टर—तुम क्या जानो दवाइयाँ...कुछ बदपरहेजी नहीं कराई।

डाक्टरनी—"अण्डा खिलाया! कहो, हाँ।"

डाक्टर—बेशक।

खल्लू—अण्डा! यह तो आग है!

डाक्टर—क्या वेवकूफी की बात करती हो?

डाक्टरनी—मुर्गी के बच्चे का शोरवा दिया? कहो, हाँ!

खल्लू—मुर्गी के बच्चे का शोरवा! यह तो आग है।

डाक्टरनी—अरे बहन शराबें दी दवाओं में। निगोड़े को शराब......।"

खल्लू—शराब! यह भी तो आग है!

डाक्टरनी—अरे बहन, टिंचर दिये उसे, गरम गरम टिंचर...।

खल्लू—टिंचर......आग......जहर......उसे तो गलसूये पर लगाते हैं।

डाक्टर—क्या बकती हो? वह दूसरा टिंचर होता है।

खल्लू—वाह! सब गरम! बिल्कुल आग, जहर.....हमने तो यह किसी को खाते नहीं सुना!

डाक्टरनी—मतलब, कि क्या कहूँ ? निगोड़े को झुलस कर रख दिया। यह तो कहो कि इधर गर्मियों में मैंने बचा लिया था तरकीबों से।

डाक्टर—आपने···आपने बचा लिया था। क्या कहते हैं ? जरूर ! और इतनी खबर नहीं, कि वह इसी टिंचर से ठीक हुआ। बराबर टिंचर ही दिया गया उसे।

डाक्टरनी—खल्लू आया, तुम तो मेरठ में थीं। वह छोकरा दवा लेने आता, तो दवा लेकर सीधा भीतर ही आता ! मैं बहन उसमें सत्त गिलोय···बंसलोचन और दरियाई नारियल मिला देती ! तब कहीं जाकर उसकी छाती की गरमी दूर हुई।

डाक्टर—हैं ! यह क्या ? गजब किया तुमने !

डाक्टरनी—लो और सुनो ! गजब वह था, या यह कि सुइयाँ भोंककर खातमा···लाख बार कहा, कि ऐसे मरीज को तो रहने दो !

डाक्टर—यह क्या गजब ढाया था !

डाक्टरनी—तुम थोड़े देखते हो कुछ ! बहन, यह नहीं देखते, कि त्योहार पर तो और आये गये यह तो···जब देखो बहन तोहफे··· भेंट की चीजें !—भगवान झूठ न बोलाये, साल में डेढ़-दो सौ रुपये फीस के इसी रहमत खाँ से आते थे। ऐसे मरीज को अगर सुइयाँ न भोंकते तो अच्छा था।

डाक्टर—इस तरह की हरकत मेरे साथ की गई है, कि मुझे अधिक आश्चर्य होता है, और मुझे यह बिल्कुल पसन्द नहीं।

डाक्टरनी—और मुझे यह पसन्द है ?

डाक्टर—क्या ?

डाक्टरनी—रहमत खाँ···वह सेठ बेचारा···महीने के महीने गाँव से घी भेजता !

खल्लू—अरे, वह चिरौंजी लाल ! वह मर गया ?

डाक्टरनी—कब का ! भोंक दी उसे भी सुई···हाँ तो चिरौंजीलाल और वह ठीकेदार·····ये तीनों के तीनों मरीज ऐसे थे, कि उनसे लगी बँधी आमदनी होती थी। फसल बदलने पर मामूली खाँसी बुखार हुआ। चलो सौ पचास रुपये फीस के आये और दवा के दाम ऊपर से। बराबर सिलसिला चला जाता था। फिर मुझे यह कैसे पसन्द हो ?

खल्लू—ऐसे मरीज का इलाज तो ठंडी दवाओं से किया जाता है।

डाक्टर—मुझे यह तो बताओ, दवा बदलने की हिम्मत कैसे हुई ?

डाक्टरनी—"जान बचाने के लिये। अब घर का खर्च कैसे चलेगा ? आमदनी वाले सब मरीज तो गायब···।"

डाक्टर—मैं कुछ नहीं जानता, आमदनी-वोमदनी।

इतने में बाहर से आवाज आई, कि कम्पाउण्डर साहब आगये। मानों चौंक से पड़े ! "आपरेशन"—मुँह से निकला।

खल्लू—अरे जल्दी जाओ, आपरेशन···!

डाक्टर तेजी से बाहर पहुँचे। वहाँ कम्पाउण्डर साहब मौजूद थे—"अजीब मामिला !"—कम्पाउण्डर साहब ने कहा।

कम्पाउण्डर—आप कहाँ थे ?

डाक्टर—क्यों ? यहीं तो था ! इन्तजार ही कर रहा था। तुम कैसे आये ? मोटर कहाँ है ? चलो न !

कम्पाउण्डर—चलें कहाँ ! आपरेशन हो भी चुका।

डाक्टर—हैं ! क्या कहते हो ? हो चुका ?

कम्पाउण्डर—और क्या ? वहाँ सब सामान तैयार था। दो बार आपको लेने के लिये मोटर भेजा ! अहमद ने कह दिया कि नहीं हैं। फिर डाक्टर बनर्जी तो मौजूद ही थे। लाचार होकर उन्हीं से आपरेशन कराया।

डाक्टर—हैं ! यह क्या गजब......अहमद...।

अहमद दौड़ते हुये आते हैं।

अहमद—जी सरकार !

डाक्टर—मोटर आया था ?

अहमद—आया तो था साहब दो बार। आपको पूछता था।

डाक्टर—फिर !

अहमद—मैंने दोनों बार कह दिया, कि लेफ्टिनेन्ट साहब नहीं हैं।

डाक्टर—अरे, मैं तो भीतर था। तुम्हारे सामने ही तो गया था।

अहमद—थे तो साहब !

डाक्टर—तो फिर तुमने यह कैसे कह दिया कम्बख्त !

अहमद—सरकार, आपही ने तो सबेरे हुक्म दिया था, हमें अगर कोई पूछे तो कह देना, कि लेफ्टिनेन्ट साहब नहीं हैं !

और यह सुनकर डाक्टर साहब गरज पड़े तो कम्पाउण्डर साहब बरस पड़े। अब आपही सोचिए, कि वह हाल हुआ, "मरे पर सौ दरे।" कहा तो जरूर था, लेकिन यह थोड़े ही कहा था, कि लेफ्टिनेन्ट साहब घर में हों तो तब भी कह देना कि नहीं हैं। अहमद ने हाथ जोड़ कर कहा—"गलती हुई, कुसूर-हुआ।" फिर अब करते भी क्या ?

गर्दन झुकाये सीधे घर में पहुँचे। बीबी ने आश्चर्य-चकित होकर कहा—अरे आपरेशन ...!

"अरे तुम तो लौटे आ रहे हो—" खल्लू बोलीं।

"अरे, गये नहीं...।"

"अरे बोलो न...।"

"अरे, यह चुप क्यों हो...?"

"खैर......।"

डाक्टर साहब ने मोढ़े पर बैठते हुये सब कुछ सुना दिया।

"अरे है !" खल्लू आया ने चीखकर कहा और माथा पकड़कर बैठ गईं।

डाक्टरनी ने कुछ न कहा। बस एक ओर को गर्दन झुक गई। रहीमन बुआ के मुँह से निकला—"हाय अल्लाह !" और रोटी तवे पर डालकर छाती पकड़कर रह गईं। तथा मुँह फाड़कर देखती की देखती रह गईं कि रोटी जलकर कोयला हो गई।

डाक्टर ने एक जँभाई ली। सिर कुछ चकरा-सा गया। आसमान की तरफ देखा ! बगले, तोते और कौवे कतार बाँधकर तेजी से बसेरा लेने चले जा रहे थे।

बगलों की कतार......जैसे फौज के सिपाही......एक उनमें सबसे आगे......उसकी दुम नोची हुई थी......लेफ्टिनेंट न हो......होगा...... आज ही हुआ हो शायद......भगवान जाने......।

एक धुँधला सा मालूम हो रहा था। जाड़ों की शाम किस तेजी से खतम हो रही थी। आसमान पर एक कालिमा सी फैलती जा रही

थी। असल में इस समय जो आपरेशन होते हैं, उसमें बिजली की तेज रोशनी की जरूरत होती है। जुम्मन ने सहसा उधर बरामदे की तरफ सामने खट से बिजली जला दी। डाक्टर जैसे चौंक पड़ा। पास के बगीचे से चिड़ियों के बसेरा लेने की आवाजें आ रही थीं। लेफ्टिनेन्टी का पहला दिन खुदा की मेहरबानी से अच्छी तरह खतम हो गया था।

महारानी का सपना

मेरी उम्र जब दो साल की थी, तो कई जगह से मेरी शादी के पैगाम आये। उनमें एक ऐसा पैगाम था, जो एक रियासत के यहाँ से आया था; लेकिन लड़की बहुत बड़ी थी। वास्तव में उसकी उम्र पन्द्रह-सोलह साल की थी और मैं केवल दो साल का बच्चा। चूँकि यह सन्देश एक महाराज की राजकुमारी का था, इसलिये पिताजी महाराज ने इन्कार तो नहीं किया, पर चुप हो गये।

जब मेरी उम्र पाँच साल की हुई तो इसी रियासत के वारिस की लड़की के लिए पिताजी महाराज ने रिश्ते की बात-चीत चलाई। उन्होंने तो अपनी लड़की के लिए पैगाम भेजा था, और यहाँ से उनकी पोती के लिए पैगाम गया। बहुत बात-चीत के बाद उन्होंने इस शर्त पर रजामन्दी प्रगट की, कि पहले लड़की से शादी कर लो। जब पोती जवान हो जायगी, उसे भी ब्याह देंगे। मानों पोती से शादी करने की शर्त ही यही निश्चित हुई, चूँकि पिताजी महाराज पोती से शादी होना जरूरी समझते थे, इसलिए उन्होंने इस शर्त को मंजूर कर लिया। और मेरा सम्बन्ध लड़की और पोती, अर्थात् फूफी और भतीजी, दोनों से पक्का कर लिया। क्योंकि ऐसा काम राजपूतों में बुरा नहीं समझा जाता।

मेरी शादी से पहले ही, पिताजी महाराज का स्वर्गवास हो गया। उनकी बरसी के बाद जब मैं आठ साल का था, तो मेरी शादी हुई।

मैं अपने माँ-बाप का एकलौता बेटा था। न मेरी कोई बहन थी, और न कोई भाई। बाप की मौत के बाद मैं गद्दी का मालिक हुआ। मैं चूँकि नाबालिक था, इसलिए रियासत का इन्तजाम कौन्सिल और एजेन्ट के हाथ में था। मेरी शादी बड़ी धूम-धाम से हुई। दोनों रियासतों की तरफ से दिल खोलकर रुपया खर्च किया गया और मैं महारानी को ब्याह लाया। उस समय मेरी उम्र आठ साल की थी और मेरी महारानी की उम्र कोई इक्कीस-बाइस साल की होगी।

× × ×

मैं बैंगनी रङ्ग की बनारसी अचकन पहने हुये था, और शर्बती रङ्ग की कमखवाब का पायजामा। प्याजी रङ्ग का साफा सिर पर था जिसमें हीरों की कलगी लगी हुई थी और चारों तरफ मूल्यवान जवाहिरात टके हुये थे। मेरे जोड़-जोड़ पर हीरे और जवाहिरात के गहने थे, और गले में पचहत्तर लाख की कीमत का सच्चे मोतियों का वह प्रसिद्ध सतलरा हार था, जिसे बादशाह जहाँगीर ने मेरे परदादा को दिया था। यह हार मेरे घुटने तक था। आजकल उसकी कीमत का ठीक-ठीक अन्दाज़ लगाना बहुत मुश्किल है।

मैं महारानी के सामने कुर्सी पर बैठा था। महारानी गुलाबी रङ्ग के कपड़े पहने थीं और गुलाबी ही शाल ओढ़े हुये। बिजली की रोशनी से सारा कमरा जगमगा रहा था। जितने झाड़-फानूस थे, सभी प्रकाशवान थे और दिन-सा हो रहा था। मैं चुपचाप बैठा अपने बायें हाथ से दाहिने हाथ की उँगली कुरेद रहा था। कभी-कभी नजर उठा कर महारानी की तरफ देख लिया करता था। जो गुलाब कपड़ों

में इस तरह लिपटी हुई थी, कि उनके हाथ की उँगलियों के अलावा और कुछ भी दिखाई न देता था। चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ था! केवल कमरे की घड़ी की टिक-टिक आवाज सुनाई दे रही थी। मुझे नींद-सी मालूम हो रही थी, कि घड़ी ने बारह बजाये। महारानी जैसे कुछ चौंक-सी पड़ीं। मैंने भी घड़ी की तरफ देखा, और महारानी की तरफ। उन्होंने अपना दुशाला उतारकर अलग रख दिया। अपनी घूँघट को कुछ ऊपर को सरकाया। मैंने उनके खूबसूरत चेहरे की एक झलक सी देखी, कि वे उठ खड़ी हुईं। मेरे पैर छूकर अपना हाथ तीन बार माथे पर लगाया और प्रेम से हाथ पकड़ कर मुझे मसहरी पर बिठाया। सुराही से शराब का प्याला उँडेल कर सामने उपस्थित किया। मैंने उनकी तरफ देखा, और फिर प्याले की तरफ। मैं चुप था। "पी लो।"—उन्होंने धीरे से कहा—पी लो। यह एक प्रथा ही है।" यह कह कर मेरे पास आकर उन्होंने अपने हाथ से शराब का प्याला मेरे मुँह से लगा दिया। मैंने दो-एक घूँट पिये। मुझे शराब से बेहद नफरत थी। उन्होंने देखा कि मैं नहीं पीता तो फिर कहा—"पी लो।" मैं पी गया, तो उन्होंने कहा—"अब एक प्याला मुझे दो।" उन्होंने स्वयं भरकर मेरे हाथ में दिया, और कहा—"यह मुझे दे दो। मैंने उनकी तरफ देखा। वे मुसुकुरा रही थीं और मैं उल्लू, काठ का उल्लू बना बैठा था। मैंने हाथ में लेकर उनकी तरफ बढ़ाया तक नहीं। उन्होंने मेरे पैर छूकर स्वयं हाथ से ले लिया और पीकर फिर मेरे पैर छुये और प्याला रख दिया। मैंने नजर उठाकर फिर उन्हें देखा। अब वे बेहद गुस्ताखी से मुसुकुरा रही थीं। "तुम चुप क्यों हो?" महारानी ने हँस कर कहा—"मैं तुम्हारी कौन हूँ?

तुम जानते हो ?" उन्होंने उसी तरह हँसते हुये कहा—"बोलो, चुप क्यों हो ? जानते हो, मैं कौन हूँ ?"

जब उन्होंने मुझे बहुत बहलाया, तो मैंने सिर के इशारे से कहा—"हाँ जानता हूँ।"

"फिर मुँह से बोलो। बताओ कौन हूँ······तुम्हारी महारानी हूँ। कहो।"

"महारानी"—मैंने धीरे से कहा।

अब उनसे जब्त न हो सका, और हँस पड़ीं। मेरे गले में हाथ डाल कर उन्होंने कहा—"तुम्हें नींद आ रही है। सो रहो।" यह कर मेरे सभी गहने एक-एक करके उतारे और अचकन उतार कर मुझे मसहरी पर लिटा दिया। मैं मसहरी पर लेटा, तो मुझे चित लिटा कर हाथ पकड़ कर कहने लगीं—"तुम शरमाते क्यों हो ? मैं तुम्हें गुद-गुदाती हूँ······।" गुदगुदी से मुझे हँसना पड़ा। मेरी शरम उन्होंने इस तरह दूर कर दी। और फिर हम दोनों दो बजे तक बातें करते रहे—"क्या पढ़ते हो ? क्या खेलते हो, और किसके साथ खेलते हो ? खाना किस समय खाते हो ?" इत्यादि, इत्यादि। और फिर नसीहतें दी जाने लगीं, कि क्या करना चाहिये। फिर मैंने कहानी सुनाई, कि किस तरह शादी से कुछ ही दिन पहले मैंने अपनी हवाई बन्दूक से एक फाख्ता मारी, और मैंने अपनी विलायती खिलौने की चर्चा की। यदि वे मना न कर देतीं तो मैं उन्हें उसी समय अपने साथ ले जाकर अपनी बन्दूक और दूसरी सारी चीजें दिखाता। उन्होंने कहा, कि सवेरे देखेंगे।

× × ×

बहुत जल्दी महारानी से सच्ची और गहरी दोस्ती हो गई। वे मेरे सभी खेलों में सम्मिलित होतीं। रईसों और जागीरदारों के एक उम्र के लड़कों की फौज की फौज थी। महारानी के साथ, और लड़कों-लड़कियों तथा दूसरी औरतों के साथ किले में दिन रात आँख-मिचौनी खेली जाती। अच्छे-अच्छे स्वाँग बने जाते और खूब खेल तमाशे होते। महारानी राजा बनतीं और मैं रानी। किले के भीतर ही भीतर धनुष बाण की छोटी-छोटी लड़ाइयाँ भी होतीं। फौजें हमला करतीं और किले जीते जाते। मतलब यह, कि महारानी मेरे बचपन के सभी खेलों में दिलचस्पी लेतीं; कि अब जो विचार करता हूँ तो बुद्धि काम नहीं करती, कि किस तरह इन बेकार बातों में जी लगता होगा।

मुझे महारानी से बहुत जल्द मुहब्बत होगई। मैं दौड़ा-दौड़ा आता तो उन पर कूद पड़ता और वे मुझे गोद में उठाकर चक्कर दे देतीं। और मैं चिल्लाता, कि मुझे छोड़ दो। वे छोड़कर गुदगुदा कर मेरा बुरा हाल कर देतीं। मतलब, कि मैं कह नहीं सकता कि इन दिनों उनके साथ मेरे कैसे मनोरञ्जक सम्बन्ध थे। बहुत शीघ्र वे किले के बाहर ऊँची इमारतों में ले गईं। और हम दोनों अब सबसे अलग रहने लगे। यदि मुझे कोई जरूरत होती तो महारानी से कह देता। यदि कोई शिकायत होती तो महारानी से कहता। रियासत के प्रबन्धकों को बुलाकर वे मेरे सम्बन्ध में खास हिदायत करती और मेरे सभी निजी मामलों के बारे में दखल देकर हुक्म जारी करतीं।

संक्षेपतः यह कि वे मेरी महारानी और गार्जियन अर्थात् निरीक्षिका, दोनों थीं। मुझे बेहद चाहती थीं। मेरे दिल में उनकी मुहब्बत ऐसी बैठ गई, कि कह नहीं सकता, कि वे किस तरह मेरा

सदैव ख्याल करती थीं। जब मैं बाहर से आता तो वे चौंक-सी पड़तीं। खुशी के मारे उनका चेहरा चमक उठता। और वे फूल की तरह खिल जातीं। अगर थोड़ी देर के लिये भी बाहर जाकर लौटता तो महारानी को अपने लिये बेचैन पाता था। उमंग में उछलते हुये दिल से जब वे कली की तरह विकसित होकर मेरे स्वागत के लिये बढ़तीं तो अपनी सहेलियों के झुरमुट में वे ऐसी मालूम होतीं, मानों चाँद है और उसके चारों ओर तारे चमक रहे हैं! मुझसे उनका कद ऊँचा था। स्त्रियों में वे ऊँचे कद, बल्कि लम्बे कद की थीं। उनके शरीर के अंग, हाथ, पैर बहुत ही उचित ढंग के थे। उनमें नज़ाकत की जगह पर स्त्रियोचित सुन्दरता के साथ ही साथ शक्ति और दृढ़ता भी थी। क्योंकि ऊँचे कद के साथ भगवान ने जहाँ उन्हें सुन्दरता दी थी, वहाँ मजबूत और उचित ढंग के अंग-प्रत्यंग भी प्रदान किये थे। मतलब यह कि वे राजपूती सुन्दरता और स्वास्थ्य की एक सुन्दर नमूना थीं। उनका साफ, चमकता हुआ सुन्दर चेहरा चाँद की तरह हमेशा चमकता रहता था। उनका रंग रूप बहुत ही गोरा चिट्टा और बे दाग था! उनके बालों पर सदैव इत्र छिड़का रहता था, जो उनके चेहरे को भी सुवासित किये रहता था। उनके चेहरे पर जो सफेद और खुशबूदार पाउडर लगा रहता था, उससे उनका सफेद और लाल चेहरा आग की तरह मालूम होता था और ऐसा ज्ञात होता था, मानों सुन्दरता की लपट निकल रही है? ज्यों ज्यों मेरी उम्र बढ़ती गई, त्यों त्यों मेरी और उनकी दोस्ती तथा प्रेम अधिक मधुर और अधिक आनन्ददायक होता गया। उनकी सुन्दरता अधिक आकर्षक हो गई। मेरे लिये उनकी जवानी अधिक

बेहोश करने वाली हो गई। चुम्बक की तरह उनका आकर्षण मुझे मुझे अपनी ओर अधिक शक्ति के साथ खीचने लगा। उनकी आँखों की चमक, जो पहले मेरे लिये साधारण बात थी, अब कुछ दूसरी ही चीज थी। मैं उन्हें देख कर बेहोश-सा हो जाता। वे मानों मुझमें समा जातीं, और मैं इस बेहोशी की हालत में एक होश खोनेवाले अजीब मरहलों में उलझ कर रह जाता; जो ढूँढ़ने पर भी मुझे दिखाई न देता।

× × ×

मेरी उम्र पन्द्रह सोलह वर्ष की और महारानी की उम्र तीस साल के लगभग थी। और यह वह समय था, जब कि मैं महारानी के प्रेम और उनकी आसक्ति में पागल हो रहा था। अगर कोई मेरी सारी दौलत, शान शौकत और रियासत माँगता तो मैं दे देता और फकीर हो जाना स्वीकार करता, लेकिन महारानी का दिल दुखाना स्वीकार न करता। मेरे जीवन का सबसे बड़ा उद्देश्य और सबसे बड़ी इच्छा वही थीं। मैं उनके साथ जिस आराम और चैन से अपना जीवन बिता रहा था, उसका अनुमान तक करना असम्भव है। दिन रात बड़े सुख से कट रहे थे। महारानी का गाना! भगवान ही बचाये! मेरा विचित्र हाल हो जाता था। महारानी गाने में अपना जोड़ नहीं रखती थीं। चाँदनी रात में झील के किनारे, संगमरमर के सुन्दर चबूतरे पर गाने बजाने की महफिलें होतीं। महारानी खूब गातीं। वे गाते गाते झूमने लगतीं और मैं बेचैन हो जाता; तड़पने लगता। नर्तकियाँ भर-भर कर प्याला आगे बढ़ातीं। महारानी मुझे अपने हाथ से प्याले पर प्याला पिलातीं। ताजी हो कर वे फिर नये सिरे

से कोई नया राग गातीं। उनकी सुन्दर आवाज झील के आस पास की पहाड़ियों में गुनगुनाती और गूँजती चली जाती। रात के बारह बजे फिर सजी हुई नावों में बैठते! नावें चाँदनी रात में पानी के ऊपर गाने और साज के साथ हिलोरे लेतीं और महारानी की रागिनीं तथा उनकी सुरीली और ऊँची आवाज़ पानी में झन झनाती मालूम देती। और देखते ही देखते सारी झील को अच्छे स्वरों से भर कर तरंगित-सा कर देती। एक तो जवानी का उन्माद, फिर सिर पर प्रेम और फिर हो आग। यह राग और यह समा; फिर मेरा दिल लगा हुआ महारानी से और महारानी का मुझसे। बार बार मैं चौंक पड़ता कि मैं कहाँ हूँ और मेरे इधर उधर क्या हो रहा है। क्या इसी को तो स्वर्ग नहीं कहते? आराम से बीतता हुआ जीवन स्वप्न की एक स्थिति-सा ज्ञात हो रहा था। मेरा, और महारानी, दोनों का प्रेम और दोनों की आसक्ति जवानी पर थी। सोच और दुःख तो बड़ी चीज है, दिल में इनका विचार तक न था कि इसी समय महारानी की भतीजी से मेरी शादी के दिन निकट आ गये। इतने निकट, कि हम दोनों चौंक से पड़े। जैसे कोई सहसा स्वप्न देखता देखता चौंक पड़ता हो। दुनिया को देखिये, कि सबको यही मालूम होता था, कि इस शादी का समय इससे अच्छा दूसरा नहीं! हालांकि ध्यान से देखा जाय तो इससे अधिक बेमौके की बात शायद ही कोई दूसरी थी! फिर अगर ससुराल वाले यह सोचते और कहते तो अच्छा भी था। लेकिन वहाँ तो रेजीडेन्ट से लेकर रियासत के मामूली नौकर तक की जुबान पर यही था, कि माशा अल्लाह महाराजा साहब बहादुर नौजवान हो गये और अब जूनियर महारानी को शीघ्र ब्याह लाना चाहिये।

जब शादी के दिन निकट आ गये, तो उसकी बुरी चर्चा से भी कान दुखने लगे। महारानी और मेरे प्रेम का यह हाल था, बस, एक जान और दो शरीर थे। इस शादी का सन्देश ही दिल में दुःख पैदा करता था। महारानी का एक ही भाई था और उसकी यह एक ही लड़की थी। किसी ने कहा है, कि फूफी भतीजी एक जात। इसलिये महारानी को भी अपनी भतीजी से अधिक प्रेम था। वे स्वयं इस बुरी चर्चा को छेड़कर मेरे पहलू में एक खंजर सा भोंक देती थी।

× × ×

एक दिन की बात है, कि झील के किनारे गाने-बजाने का आनन्द से भरा हुआ समारोह हो रहा था। नर्तकियाँ सुनहली टोपियाँ दिये हुये मस्ती से नृत्य कर रही थीं। कभी कभी मेरी आँख, नाच के झमाके के साथ, नाच, की ओर चली जाती थीं, नहीं मैं तो इससे कहीं अच्छा नाच देखने में तन्मय था। मैं महारानी की आँखों का नृत्य देख रहा था। या उस प्रेम का, जो उनके चेहरे पर उछल रहा था। और जिससे उनके ओठों पर ऐसा-ऐसा कम्पन हो रहा, था, कि मालूम होता था, कि उनके सारे चेहरे पर मुसकुराहट नाच रही है। गाने में, नाच के झमाके के साथ, मै स्वय भी ताल देने लगता था। मतलब यह कि एक अनोखी ही रङ्गीन परिस्थिति थी। तबीयत आनन्द में बेहोश थी कि इसी मस्ती की दशा में मेरी शादी की चर्चा छिड़ गई। मुझे क्या मालूम था, कि यह महफिल इस प्रकार अस्त-व्यस्त हो जायगी। इस असामयिक चर्चा का आरम्भ एक सेहरे से हुआ, जो गाया जा रहा था। शीघ्र उसी सेहरे का एक पद मुझ पर लागू किया जाने लगा। नौबत बातचीत तक पहुँचीं।

"तुम क्या चाहती हो ?"—मैंने कहा ।

"मैं क्या चाहती हूँ ? मैं यह चाहती हूँ, कि मेरी भतीजी को तुम जल्द व्याह लाओ ।"—महारानी ने बड़ी खुशी से कहा । मैं उनके चेहरे की तरफ देखकर उनके दिल को टटोलने की कोशिश करने लगा। नाच बराबर हो रहा था, और नर्तकियाँ नशे में मस्त होकर तितलियों की तरह फरफरा रही थीं और हम दोनों आपस में बातें कर रहे थे। मुझे यह सन्देह हुआ कि महारानी मेरे प्रेम की कहीं परीक्षा तो नहीं ले रहीं हैं। मैंने उनके चेहरे और रङ्ग-ढङ्ग से उनके दिल का हाल मालूम करने की व्यर्थ कोशिश करने के बाद कहा—तो अब तुम्हारा हो चुका। तुम्हारी भतीजी यहाँ आकर मुझसे प्रसन्न न रहेगी।"

महारानी ने कहा—"यह तुम्हारा ख्याल है। वह तुम्हारे उम्र की है। मुझसे अधिक मुझसे कहीं अधिक सुन्दर और आकर्षक है। तुम्हारा उसका जोड़ा······बस, यही मालूम होता है, कि तुम दोनों को ईश्वर ने एक-दूसरे के लिये पैदा किया है। वास्तव में हमारा-तुम्हारा जोड़ नहीं। दुनिया यही कहती है, और ठीक भी है। क्योंकि तुम मुझसे उम्र में बहुत छोटे हो।" मैं फिर महारानी को घूरने लगा कि कहीं अपने उन स्वाभाविक भावों को, जो उनकी भतीजी के विरुद्ध उनके दिल में हैं या होना चाहिये, इन शब्दों में छिपाने का प्रयत्न तो नहीं कर रही हैं। मुझे कुछ सन्देह सा मालूम हुआ कि मैंने चोर पकड़ लिया। क्योंकि थोड़ी देर के लिये उनके जगमगाते हुये चेहरे पर एक झपकी की तरह एक छाया आई, और फिर चली गई ! जैसे, शोक की बदली की छाया हो ! जो उनके जगमगाते हुये चेहरे पर झपकी की तरह छा गई हो। मैंने एक लम्बी सी साँस लेकर महारानी से कहा—

"मेरे दिल में किसी दूसरे के लिये बिलकुल जगह नहीं। मुझे तुम से बेहद······।"

"मैं जानती हूँ"—महारानी ने बात काटकर कहा—मैं जानती हूँ, कि तुम्हें मुझसे बेहद मुहब्बत है। लेकिन मुझमें और तुझमें जमीन और आसमान का अन्तर है। मेरे दिल में बस एक जगह है, और वह भरी हुई है। लेकिन तुम्हारे दिल में कई एक के लिये जगह है 'मैं सीनियर महारानी हूँ, और तुम महाराज हो। तुम्हें दूसरी शादी तो करनी ही है। लेकिन इसके अतिरिक्त और भी जितनी चाहो, कर सकते हो।"

"मैं नहीं करूँगा"—मैंने तेज होकर कहा—मान लो, मैं तुम्हारी भतीजी से शादी करने से इन्कार कर दूँ!"

नर्तकियाँ नाचती कूदती दूसरी नाव पर जा पहुँची थीं। शायद उन्होंने यह समझ लिया था, कि इन्हें एकान्त की जरूरत है। क्योंकि साजवालियाँ पहले से ही इशारा करके उठ चुकी थीं। हम दोनों अब अकेले थे।

महारानी ने पूरी राजपूती आनबान से तनकर कहा— 'तुम राजपूत हो। तुम स्वयं रियासत के मालिक हो। तुम राजपूत हो······तुम ऐसा नहीं कर सकते! और फिर······और फिर वह भी ऐसी सूरत में जब मैं तुम्हारे घर में हूँ। मैं तुम्हारी चहेती महारानी हूँ। तुम ऐसा नहीं कर सकते।"

तुम्हें छोड़कर और किसी से मुहब्बत नहीं हो सकती।"-मैंने कहा।

महारानी ने मेरे पैर छूकर मस्तक में हाथ लगाते हुये मानो कृतज्ञता प्रगट करते हुये—कहा तो क्या हर्ज है? राजपूत राजाओं की

राजकुमारियाँ रियासत के तख्त और ताज का आभूषण होती हैं। एक बड़ी रियासत की बेटी, या एक महाराजा की बेटी को महाराजा के ही घर जाना चाहिये। महाराजा गिने-चुने हैं और राजकुमारियाँ बहुत अधिक हैं। मेरे भाई की बेटी किसी ऐसे-वैसे के यहाँ नहीं जा सकती। मुहब्बत दूसरी चीज है, और शादी दूसरी चीज है! तुम्हें अगर मेरी भतीजी से प्रेम नहीं है तो न हो, मुझसे तो है। बस, यही प्रेम इस बात का प्रमाण है, कि तुम शादी अवश्य करोगे। तुम्हें शादी करनी पड़ेगी। तुम बात दे चुके हो। तुम गजब करते हो। भला सोचो तो, कि मेरी भतीजी एक बड़ी रियासत की पोती और एक बड़ी रियासत की लड़की है। वह बड़ी रियासत में न ब्याही जाय; और फिर मेरा वजह से! यह असम्भव है!"

मैंने इस लेक्चर को सुना और सुनकर महारनी को सिर से पैर तक देखकर कहा—'तो क्या, तुम सचमुच दिल से चाहती हो, कि मैं तुम्हारे ऊपर तुम्हारी भतीजी को सौत बनाकर ले आऊँ? क्या सचमुच तुम यह दिल से चाहती हो?

महारानी ने कुछ अजीब ही ढङ्ग से कहा—"बेशक मैं दिल से चाहती हूँ। और क्यों न चाहूँगी, मेरा एक ही भाई है और एक ही भतीजी है।"

"लेकिन मुझे उससे बिलकुल प्रेम न होगा।"

महारानी ने मुसुकुरा कर कहा—"तुम अभी बच्चे हो। बच्चों की सी बातें करते हो। जब दो दिल मिलेंगे, तो आखिर क्यों न प्रेम होगा? खुदा न खास्ता, तुम औरत तो हो नहीं!"

मैंने बुरा मानकर झुँझला कर कहा—तुम मेरे प्रेम को ठुकरा रही हो। क्या मैं छोटा हूँ ? क्या मैं तुमसे नकली प्रेम करता हूँ ?

महारानी ने दो बार मेरे पैर छूकर हाथ अपनी आँखों और मस्तक पर लगाया, और दाँतों तले जीभ दाब कर कहा—"हरगिज नही, हरगिज नहीं। तुम वास्तव में समझते नहीं ? तुम्हारा प्रेम मुझसे लड़कपने का प्रेम है ! तुमने तो मुझसे प्रेम का सबक सीखा है। असल में सच्ची बात यह है, कि एक औरत को एक नई उम्र के लड़के के साथ तो अन्तिम प्रेम हो सकता है, लेकिन यह आवश्यक नहीं कि एक लड़के का भी यही हाल हो। और फिर एक ऊँची रियासत के महाराजा, जो वैसे भी एक दिल नहीं रखते। उनके दिलों में···।" महारानी ने एक विचित्र ढंग से मुसकुराते हुये कहा—उनके दिलों में तो कबूतरखाना की तरह खाने होते हैं।"

महारानी ने तो यह मुसकुरा कर कहा, और मैं इन सभी पचड़ों को छोड़ कर उनके सुन्दर चेहरे पर लगे हुये सुगधित, चमकदार और सफेद पाउडर की दमक को देख रहा था। उनकी मुसकुराहट न जाने मेरे लिये क्या थी ? उनके चेहरे की दमक, और फिर उनकी आँखों की असाधारण चमक ! उनकी बड़ी बड़ी पलकों से मानों चमक की चिनगारियाँ सी निकल रही थीं। सौन्दर्य की यह अधिकता, और फिर ये बातें ! मैं बेचैन सा होगया। मैंने बेचैन होकर उनका सुन्दर हाथ उठा कर चूम लिया और उसे अपने दिल पर रखकर शिकायत के स्वर में कहा—इस दिल में तो बस एक ही खाना है और उसमें केवल तुम हो !'

"केवल मैं !"—दबी हुई आवाज से महारानी ने पलकें झपका कर कहा।

तुम···तुम···।"—धीरे से मैंने लम्बी लम्बी साँस लेते हुये कहा—'मेरी महारानी·····मेरे दिल की रानी······दिल की महारानी !"

वे धीरे धीरे मेरी तरफ बेकाबू होकर झुकी चली आईं ? प्रेम के नशे में हम दोनों चूर थे ; उनको मुझसे और मुझे उनसे प्रेम था। मैंने उनके खूबसूरत बालों को उँगुली से सहलाया, कि उनके चेहरे पर सुनहले सुगंधित पाउडर की वर्षा-सी होगई। ये मुसकुरा रही थीं। मैंने कहा, कि एक जल्सा और हो, फिर सोयें ! महारानी की हँसी की आवाज से एक जीवन सा पैदा होगया। उनकी ताली बजते ही छमा-छम और झनाझन की आवाज़ें होने लगीं और नर्तकियों का नाच शुरू होगया !

बहुत शीघ्र नाच खतम करके महारानी ने अकेले गाना शुरू किया। पहली ही लय पर मुझे एक मूर्छना सी आई। फिर जो उन्होंने तान खींची और प्रेम का गीत जो गाया तो मुझे ऐसा मालूम होने लगा, कि जैसे उनकी सुरीली आवाज लकड़ी चीरने का एक बड़ा आरा है जो मेरे दिल को चीरे डाल रहा है ! उनकी आवाज में एक विचित्र सोज और एक विचित्र वेदना थी। मैं झपकी पर झपकी ले रहा था। और मेरे इस हाल को देख कर उनकी आवाज का झन्नाटा और भी अधिक तेज होता जा रहा था। वे ऐसा गीत गा रही थीं, जो कि दिल पिघलाये दे रहा था। एक स्त्री अपने पति के वियोग में व्याकुल थी। मैं चुप होगया, और सिर पकड़ कर आँखें बन्द करके

सुनने लगा। उनकी आवाज और भी अधिक पीड़क होगई और मेरा दिल न जाने क्यों ऐसा घबड़ाया, और ऐसी आकुलता पैदा होगई, कि मैंने घबड़ा कर सहसा हाथ से साज रोक दिया। महारानी भी रुक गई। मैंने इशारा किया, और सभी नाचने वालियाँ परछाईं की तरह अदृश्य होगईं। मैंने महारानी की तरफ देखा। उनकी पलकों में दो आँसू थे। मेरा दिल मसल उठा, और मैंने कहा—"यह क्या ?"

"कुछ नही"—महारानी ने कहा—गीत ही कुछ ऐसा था।"

"हाँ !"—मैंने कहा—मैं भी परीशान हो गया और मेरा भी दिल घबड़ा उठा। अब आराम करो !" मैंने अँगड़ाई लेकर झील के चारों ओर दृष्टि डाली। चाँदनी खिली हुई थी। दूर तक भयानक पहाड़ों की श्रेणी फैली हुई थी। एक विचित्र सन्नाटे की स्थिति थी। मुझे कुछ ऐसा मालूम होता था, कि जैसे सारी झील और पहाड़, मानों सारा वायु मंडल ही रोने के स्वर से परिपूर्ण था; जो अभी अभी बन्द हुआ था। मैंने दिल में आश्चर्य प्रगट किया, कि गाना भी विचित्र जादू है। वेदना से भरे हुये पीड़क गीत ने सारे वायु मण्डल को प्रभावित कर दिया।

× × ×

महारानी बड़ी तेजी से अपनी भतीजी की शादी की तैयारियाँ कर रहीं थीं। सभी प्रबन्ध और सभी काम उनकी ही मरजी के अनुसार हो रहे थे। लाखों रुपये के गहने और कपड़े खरीदे गये और लाखों रुपये के दूसरे सामान भी खरीदे गये। महल का एक खास भाग सजाया गया। इन्हीं प्रबन्धों के संबंध में महारानी अपने भाई के यहाँ भी गईं और उधर के प्रबन्ध में भी उन्होंने दखल दिया। मतलब

कि वे अपनी भतीजी की शादी में इस प्रकार लगी हुई थीं; जैसे, कि एक फूफी को लगना चाहिये। मैं इन सभी प्रबन्धों को देख कर दुखी सा होता जाता था। उनकी इस तन्मयता से मेरे दिल पर चोट-सी लगती थी। वास्तव में उनकी भतीजी के प्रति अपने दिल में विरोध की भावना पाता था। क्योंकि यह मुझे स्वीकार न था, कि महारानी के प्रेम का भाग किसी दूसरे को भी मिले। मैं यह कहना चाहता था, कि महारानी मुझे छोड़कर दुनिया में किसी दूसरे से प्रेम ही न करें। मैं यह चाहता था, कि वे मेरे प्रेम के कारण अपनी भतीजी से जलने लगें। किस तरह मूर्खता से भरा हुआ यह विचार था। लेकिन मैं अपने दिल को क्या करूँ? उनका इस तरह शादी में भाग लेना मेरे लिये बहुत बड़ी मुसीबत थी। मैं उनसे कहता था, कि "अगर तुम्हें मुझसे मेरे ही जैसा प्रेम है, तो तुम्हें अपनी भतीजी से जलना चाहिये।" वे इस पर मुसकुरातीं और कहतीं—"सच कहते हो। तुम्हारा जैसा प्रेम मुझे नहीं है। क्योंकि जितना तुम मुझसे प्रेम करते हो, उससे कहीं अधिक मैं करती हूँ।" और फिर वे एक अजीब ढङ्ग से मुझे देखतीं, कि जैसे उन्हें मेरे हाल पर दया आती हो और वे मुझसे सहानुभूति रखती हों। वे हँसकर कह देतीं—"अभी तुम नासमझ हो। तुम्हें यदि मुझसे प्रेम है तो आखिर मेरी भतीजी से क्यों डरते हो?

× × ×

एक दिन की बात है, कि रात में किसी असाधारण सरसराहट से मेरी आँख खुल गई। ऐसा मालूम हुआ, जैसे एक परछाईं थी, जो जागने के बाद, लेकिन आँख खोलने से पहले ही आँखों के सामने आई और चली चली गई। मैंने सिर उठा कर देखा तो कुछ भी न

था। महारानी निद्रा में बेहोश थीं। दूसरे दिन भी ऐसा ही हुआ। और तीसरे दिन भी ऐसा ही हुआ। मतलब, कि प्रायः ऐसा ही होता और फिर घड़ी पर दृष्टि जाती तो समय भी पिछले पहर का होता। जब कई बार ऐसा हुआ तो मैंने महारानी से कहा, लेकिन उन्होंने टाल दिया कि यों ही तुम्हें सन्देह होता है। मैं सोच-विचार में ही था, कि आखिर यह पहेली अपने आप हल हो गई। रात को एक दिन ऐसा ही हुआ, और मेरे चेहरे पर गरम-गरम दो आँसू गिरे। क्योंकि महारानी मेरे चेहरे को बड़े ध्यान से देख रही थीं। वे कुछ घबड़ा-सी गईं और मेरी तरफ से मुँह मोड़ लिया और अपनी मसहरी पर लेट गईं। मैंने शीघ्र ही उनका हाथ पकड़कर कहा—"क्यों?" मैंने उन्हें घसीट कर अपने पास बिठा लिया। क्योंकि मेरी तरफ मुँह करने से भाग रही थीं। मैंने उनकी रोनी सूरत देखी! मेरा दिल कट गया। और मैंने बेचैन होकर कहा—"मेरी जान!" मैंने उन्हें छाती से लगा कर पूछा—"क्यों रोती हो? क्या हुआ?" लेकिन वे कुछ न बोलीं और रोने लगी। मैं हैरान हो गया। और ज्यों ज्यों कारण पूछता, वे और भी बेकाबू होती जातीं। यहाँ तक, कि हिचकी बँध गई। और मुझे उन्हें सँभालना अत्यन्त कठिन होगया। मैं उनसे बेहद और बहुत ज्यादा प्रेम करता था। मैंने उन्हें कभी रोते नहीं देखा था। उनकी इस बुरी हालत को देखकर स्वयं भी अपने को रोक न सका और उन्हें कलेजे से लगा कर स्वयं इस प्रकार रोया कि बेहाल हो गया। जब दोनों खूब आँसू बहाये तो कम से कम मुझे तो मालूम हो हो गया कि हम दोनों किस लिये रोये हैं? अर्थात् शादी के कारण। मैं अब रो-धोकर प्रसन्न था, कि उनको भी मेरी इस बात से डर है।

लेकिन जब मैंने उनसे इस बात की चर्चा की, तो उन्होंने आश्चर्य के साथ कहा, कि "तुम्हारा यह समझना गलत है। क्या मैं नहीं कह चुकी, कि मेरी प्रसन्नता इसी में है, कि मेरी भतीजी की शादी तुमसे हो जाय।" मैं बहुत चकराया और फिर मैंने रोने का कारण पूछा तो मुझे मालूम हुआ, कि उनका रोना किसी स्वप्न के कारण है। जब मैंने हठ किया तो उन्होंने बताया, कि मैं प्रति-दिन एक भयानक और बुरा स्वप्न देखती हूँ, उसके बाद देर तक तुम्हारे चेहरे को देखती हूँ। जिससे कुछ धैर्य सा हो जाता है। यह सपना जो वे आज कल देख रही हैं, पहली बार उन्होंने उस समय देखा था जब मैं पाँच साल का था और मेरे साथ उनका विवाह हुआ था। इसके बाद फिर साल में दो तीन बार यही सपना देखा। फिर हर महीने दिखाई देने लगा। अब तो धीरे-धीरे नौबत यह आगई थी, कि सप्ताह में पाँच दिन या तो पूरा का पूरा दिखाई देता, नहीं तो उसका कोई न कोई भाग तो अवश्य देखने में आता था। जब मैंने कहा, कि आखिर वह स्वप्न क्या है, और मुझे बताओ तो उन्होंने कहा, कि "बस, यह न पूछो तो अच्छा है। मैं अपने जुबान से उसे नहीं दुहरा सकती।" उन्होंने एक गहरी साँस लेकर कहा—"जो मैं इस सपने को देखती हूँ, वह कहने की चीज नहीं और मेरी जुबान से नहीं निकल सकती।" लेकिन जब मैंने अधिक आग्रह किया, और उन्हें अपनी तथा अपने प्रेम की शपथ दिलाई तो उन्होंने कहा—अच्छा बताती हूँ। लेकिन फिर यही कहा, कि देखो मत पूछो! अच्छाई इसी में है, कि मत पूछो। लेकिन मैंने न माना, और उन्हें अधिक विवश किया तो उन्होंने इस प्रकार कहा—

"मैं स्वप्न में यह देखती हूँ, कि जैसे किसी त्यौहार का दिन है और मैं दरबारी वेश में बड़े ठाट-बाट से स्त्रियों के दरबार वाले कमरे में बैठी हूँ। सभी गहनों से लदी हुई हूँ। बाँदियाँ और सेविकायें मेरी रत्न जटित कुर्सी के इधर-उधर खड़ी होकर मोर्छल झल रही हैं। मुझे अपने शृंगार का बहुत ध्यान रहता है। बालों में कंघी करने वाली आइना लेकर कुर्सी के बगल में खड़ी है! अगर कहीं एक बाल भी इधर उधर हो जाता है, शीघ्र ही कंघी करने वाली आइना दिखाती है। अगर कपड़े का ढङ्ग रंच मात्र भी बिगड़ जाता है, तो आइना दर्शिका ठीक कर देती है। मैं बहुत प्रसन्न हूँ और तुम्हारे ख्याल में दिल डूबा हुआ है। प्रत्येक क्षण में तुम्हारी प्रतीक्षा है और तुम अब आने ही वाले हो। अगर किसी की आहट होती है तो तुम्हारा सन्देह होता है। और प्रसन्नता से दिल बाँसों उछलने लगता है। ऐसे समय, जब कि मैं स्वयं प्रतीक्षा और उत्कंठा बनी हुई हूँ, एक विचित्र हंगामा-सा होता है।"

महारानी इतना सुनकर कुछ रुक गईं। उनके चेहरे पर कुछ भय सा छा गया। वे एक रहस्य पूर्ण और बहुत ही अबोधता के साथ मुझे देखने लगीं। मेरी तरफ और अधिक खिसक आईं। मैंने कहा—"फिर क्या हुआ?" उन्होंने अपने ओठों को अपनी जीभ से तर किया। वे निराश-सी थीं और उनके ओंठ सूखे जा रहे थे। "उसी प्रतीक्षा के समय"– महारानी ने कहा—"इसी प्रतीक्षा के समय, दूर से एक नौकरानी के चीखने-चिल्लाने की आवाजें आती हैं। इस प्रकार कि शरीर के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। पूर्व इसके, कि मैं पूछूँ, कि क्या बात है, वह नौकरानी सहसा चीखती-चिल्लाती और बदहवास भागती हुई आती

है। उसके गले की रगें तनी हुई हैं। नंगे सिर, अधिक परीशान चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही हैं। आँखें मारे डर के निकली पड़ती हैं। वह इस प्रकार बदहवास होकर कमरे में चीखती-चिल्लाती आती है, कि मैं बिल्कुल परीशान-सी हो जाती हूँ। कमरे में उसका आना हलचल-सा मचा देता है। वह सहसा मेरे सामने आकर घुटने टेककर गिड़गिड़ाती है। कुछ कहना चाहती है, लेकिन मारे डर के चौंक रही है और उसके मुँह से कुछ शब्द नहीं निकल पाते। बड़ी कठिनाई से, जिस ओर से आरही थी, उस तरफ से मुँह मोड़ कर कहा--वह··· व ······व······वह······व······वह······आ रही है······वह ······ओ······ओ······।" मैं परीशान होकर उससे पूछती हूँ, "अरी कम्बख्त, आखिर वह कौन है?" लेकिन उसकी जुबान से इसके अलावा वह······वह······वह के कुछ निकलता ही नहीं है। वह रह रहकर जिधर से आई है, उसी ओर देखती है, और 'वह वह' से अधिक कुछ कह ही नहीं सकती। पूर्व इसके, कि मैं पूछ सकूँ, बाहर से भी चिल्लाने की आवाजें आती हैं, कि मारे डर के सब दहल उठते हैं। एक बहुत हंगामा सा पैदा हो जाता है। चीखने-चिल्लाने रोने-पीटने और दौड़ने-भागने की आवाज से सारा महल गूँज उठता है। देखते ही देखते प्रलय के बाढ़ की तरह चीखती, चिल्लाती रोती-पीटती सारे महल की स्त्रियाँ-बांदियाँ, नर्तकियाँ इत्यादि आकुल हो हो कर भगदड़ की तरह इस प्रकार अपने को भूल कर एक के ऊपर एक गिरती पड़ती इस कमरे में प्रवेश करती हैं, कि सहसा बिलकुल अँधेरा हो जाता है। सारा इजलास खतम हो जाता है और कमरे में आकुलता फैल जाती है। मैं बदहोश होकर खड़ी हो जाती हूँ। और

चिल्लाती है, कि तुम्हें कोई खबर करे और फौज बुलवाई जाय। क्योंकि साफ प्रगट है, कि कोई मुसीबत इस कमरे की तरफ चली आरही है। क्योंकि इस शोर गुल का भी यही मंशा है, कि "वह आ रही है।" ।" इस शोर गुल में मेरी कोई नहीं सुनता। क्योंकि सबके होश-हवाश गायब हैं। इसी समय एक भयानक······।

महारानी इतना कह कर डर-सी गईं, उनका चेहरा जो हमेशा चमकता रहता था, मिट्टी के रंग की तरह हो गया। वे मेरे और भी अधिक निकट आगईं। मैंने उन्हें अपने और निकट खींच कर कहा..."घबड़ाओ नहीं, घबड़ाओ नहीं।" उन्होंने कुछ साँस लेकर फिर अपनी बात जारी की:—

इसी बीच में एक भयानक, बहुत ही भयानक! लेकिन, लेकिन वह हँसी, कि दिल को हिला देनेवाली! घृणा से भरी हुई आवाज इतने जोर से गूँजती हुई आई, कि सब अपनी, अपनी जगह पर सिमट कर रह गये। मुझे स्वयं ऐसा मालूम हुआ, कि जैसे मेरा खून मेरे शरीर में बिल्कुल जम गया हो। जो अभी अभी इस शोर गुल की तेजी के कारण गरम-गरम शीशे की तरह मेरी रगों में इस तरह दौड़ रहा था, कि मालूम होता था, कि रगों को तोड़कर किसी तरफ निकल जायगा······भय······भय की अधिकता के कारण कँपकँपी के साथ एक मूर्च्छना-सी आई। आपदा निकट थी······आहट सुन कर शरीर के रोंगटे खड़े हो गये। कहाँ तो सारा कमरा शोर गुल से उड़ा जा रहा था और कहाँ यह हाल हुआ, कि एक ऐसा सन्नाटा छा गया, जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता। ऐसा सन्नाटा, कि अगर सुई भी गिरती तो उसकी आवाज भी सुनाई पड़ जाती। अब

यह हाल था कि न दरवाजे की तरफ देखा जाता था, और न उधर से निगाह हटाते बनता था, कि जिधर से यह आपदा आ रही थी। इतने में एक फुंकार-सी आई और दरवाजे पर कालिमा सी छा गई। वाह ⋯वह बला आगई, मेरे सामने आगई !"

महारानी का चेहरा भय से पीला पड़ गया। हल्क में काँटा सा पड़ गया, और वे मेरी तरफ इस प्रकार घबड़ा कर खिसक आईं, कि मैं घबड़ा गया। मैंने उन्हें कलेजे से लगा लिया—"डरो नहीं, डरो नहीं। तुम क्यों डरती हो ?" महारानी आँखें बन्द किये मेरी गोद में पड़ी काँप रहीं थीं। मैंने धीरज बँधाया, और फिर पूछा—"आखिर वह कैसी बला थी, मुझे भी तो बताओ ! क्या थी ? कैसी शकल थी ?"

महारानी ने भयभीत स्वर में कहा—"नहीं, नहीं, मुझसे कहा नहीं जाता।⋯मुझे बचाओ।" यह कह कर वे डर के मारे मुझसे लिपट गईं।

मैंने तकिये के नीचे से रिवाल्वर निकाल कर कहा—"डरो नहीं, डरो नहीं। तुम्हारे दुश्मन के लिये एक गोली ही काफी है। क्या फौज बुला लूँ ? टेलीफोन करके तोपखाना बुलवा लूँ ?"

"नहीं नहीं—मैं सबेरे बताऊँगी।"

मैंने घड़ी देख कर कहा—"अब सबेरा होने में क्या देर है ?" मेरे कहते ही किसी दूर की मस्जिद से सबेरे की आज़ान की आवाज आई। "लो सबेरा हो गया।"—मैंने कहा—"देखो आजान हो रही है। अब सबेरा ही है।" यह कह कर मैंने घंटी का बटन दबा दिया, जो मसहरी के सिरहाने लगा हुआ था। शीघ्र एक नौकरानी दौड़ती हुई आई और मैंने कहा, कि—"देखो, किसी सवार को जल्द दौड़ाओ,

कि उस आदमी को जो आजान दे रहा है, आज दस बजे दिन हमारे सामने हाजिर करे।

"उसे क्यों बुलाते हो ?"—महारानी ने मुझसे पूछा।

वास्तव में इस आवाज को मैं बहुत दिनों से सुनता आ रहा था। इस आवाज को अच्छी तरह पहचानता था। न मालूम क्यों, प्रायः यही ख्याल होता था, कि इस आवाज से इनका पुराना संबंध है। लाओ इस आदमी को तो देखूँ ! कई बार विचार किया, पर रह गया।" महारानी से मैंने कारण बता कर कहा—तुम अपना सपना कहो।

महारानी का डर दूर हो चुका था। उन्होंने निश्चिन्तता से बात कहनी शुरू की—"उ ··उसकी शकल···उस आपद की शकल बहुत ही बुरी, भयानक और डरावनी थी। उसका चेहरा बिलकुल काला था। और मुँह पर फुन्सियाँ और मुहासे थे। ये मुहासे बहुत ही गन्दे और डरावने थे। उनमें कोई लाल था और कोई पीला। बहुत मजबूत; लेकिन एक ठिगनी औरत थी। एक छोटी-सी धोती पहने हुये थी। उसके कन्धों पर बाल बिखरे हुये थे। बिना अतिशयोक्ति के उसकी गर्दन शेरिनी की तरह की थी और वैसा ही उसका सिर था। लेकिन उसका सारा चेहरा बेहद बुरा, बेहद भयानक और बेहद घृणा के योग्य था। उसकी बड़ी बड़ी आँखें जो नारंगी की तरह गोल गोल थीं, निकली पड़ती थीं और उनमें सफेदी और स्याही के स्थान पर पीलापन था, जिसमें से पीली प्रतिच्छायायें निकलती मालूम होती थीं। बहुत ही मनहूस और भयानक मुँह था। बड़ी बदसूरत नाक थी और नाक और मुँह, दोनों से गन्दगी बह

रही थी। उसकी ठोड़ी इस तरह मिली हुई थी, कि जैसे जानवर जुगाली करता है। उसके गले की मोटी-मोटी रगें उसके चेहरे को और भी अधिक भयानक बनाये देती थीं। उसने कमरे में प्रवेश करते ही एक पुकार-सी मारी। यह उसकी मसखरी से भरी हुई मुसुकुराहट थी। मैंने देखा, कि जैसे उसका जबड़ा उसके कानों तक फैल गया। उसके भयानक दाँत जो बड़े-बड़े थे, गन्दे और बुरे दातों के सहित दिखाई दिये। उसने कमरे में आते ही अपनी लकड़ी जोर से पटक कर कहा—"महारानी रामावती कहाँ है?" यह कह कर मेरी तरफ देखा और फिर मसखरा पन के साथ कहा—"रामावती! रामावती!!"

महारानी रुककर मेरी तरफ देखने लगीं।

मैंने कहा—क्यों? क्या हुआ? कहो?··· ।

मैं नहीं कह सकती।"

"क्यों, क्यों नहीं कहती? कहो, कोई डर नहीं। आखिर ऐसी कौन-सी बात है, जो तुम नहीं कहतीं। मैं समझ गया और मैंने बड़े आग्रह के साथ कहा—यह तो स्वप्न है। तुम कहो, जरूर!।

महारानी ने रुक-रुक कर कहा—"उसने कहा महारानी तू···।"

महारानी फिर रुकी तो मैंने फिर कहा—"कहो!"

"······तू राँड हो गई!—महारानी ने कहा—उसने मुझसे कहा—चिता में बैठ, तू राँड हो गई!" यह सुनते ही मेरा कलेजा धक से हो गया और चेहरा फक़ हो गया! उसने फिर मेरी तरफ उसी ढंग से देख कर यही शब्द दुहराये और अब मैंने देखा, कि उसके गन्दे हाथ पंजे की तरह थे और उसके नाखून चील्ह के

पंजों की तरह तेज थे ! इतने में मैंने तुमको दूर से आते देखा ! तुम वही कपड़े पहने हुये हो, जिन्हें पहन कर तुमने अभी हाल में अपनी बड़ी रंगीन तसवीर खिंचवाई है !

मैंने बात काट कर कहा—यह स्वप्न तो तुम मेरे उन कपड़ों के तैयार होने से पहले से देख रही हो ! क्या सदा से वही कपड़े देख रही हो ?

महारानी ने कहा—हाँ ! रंग वही देखती हूँ । सुनहरी बूटे भी वही और गहने तथा हीरे जवाहिरात भी वही ! मतलब कि सब वही ! अधिक से अधिक यह सम्भव है कि अचानक फूल और बूटे मुझे याद न रहे हों और मैंने ध्यान न दिया हो; लेकिन जहाँ तक मुझे ख्याल है, बूटे भी मुझे याद हैं, और फिर जब तसवीर बनकर आई है, और वे कपड़े देख लिये हैं, तब से तो बिल्कुल वही देखती हूँ ।

मैंने कहा—अच्छा, तुम अपनी कहानी पूरी करो ।

महारानी ने सिलसिला शुरू किया······तुम मुसुकुराते हुये कमरे में आये । तुम बहुत ज्यादा खूबसूरत मालूम हो रहे थे । तुम्हें देखते ही मेरा ढाढ़स बँधा । लेकिन मेरे आश्चर्य की सीमा न रही, जब मैंने देखा, कि उस मनहूस मुसीबत से लड़ने-झगड़ने के स्थान पर उससे बातें करने लगे । वह सिर और ठोड़ी हिलाहिला कर तुमसे चुपके-चुपके कुछ बातें करके मुसुकुरा रही थी । तुमने मेरी तरफ देखा और फिर उसकी तरफ देखकर मुसुकुराकर मुझसे कहने लगे—तू बेवा हो गई··· तू राँड़ हो गई, और अब तुझे सती हो जाना चाहिये । "मैं तुम्हारी तरफ आकर्षित होकर जो अब देखती हूँ तो बला गायब ! लेकिन तुमने फिर मुझसे कहा—तू बेवा हो गई, और अब शीघ्र सती हो जा ।" अब

मेरी हालत भी विचित्र है। यह न कहकर, कि तुम मेरे सिर पर मौजूद हो, और ईश्वर तुझे हजार साल की उम्र दे, मैं सुहागिन हूँ। सती क्यों होऊँ ? मैं कुछ नहीं कहती, बल्कि कहने पर विश्वास कर लेती हूँ। तुम मुझे शीघ्रता करने के लिये सतर्क करके कमरे से चले जाते हो। इस प्रकार बुरे स्वप्न का पहला दृश्य समाप्त होता है जो कभी तो मुझे पूरा का पूरा दिखाई देता है और कभी बाकी हिस्से के सहित तथा कभी-कभी-कभी उसका कोई खास अंश।

"दूसरा भाग भी इस स्वप्न का बताओ"—मैंने महारानी से कहा—"तुम्हारा स्वप्न भी बड़ा विचित्र है।"

महारानी ने फिर अपने स्वप्न का सिलसिला जारी किया—"इसके बाद मैं क्या देखती हूँ, कि एक जनाजा तैयार है। मैं एक कपड़ा हटा कर जो देखती हूँ, तो सिर पीट लेती हूँ। क्योंकि सचमुच······सच-मुच तुम्हारी ही लाश है। तुम वही कपड़े पहने हुये हो। मैं उसे ढँक देती हूँ, कि इतने में तुम आ जाते हो। आश्चर्य तो इस बात का है, कि तुम्हें देखती हूँ, और फिर भी नहीं कहती, कि यह रहस्य क्या है ? तुम स्वयं उस लाश पर से कपड़ा हटाकर देखते हो। मैं लाश को देखती हूँ, और फिर तुम्हें। थोड़ा सा भी फर्क नहीं पाती। वही सूरत, वही शकल, वही गहने, वही हीरे, और वही मोती। बिलकुल वही, रंचमात्र भी अन्तर नहीं। तुम फिर जनाजा ढँक देते हो। इस प्रकार दूसरा दृश्य समाप्त हो जाता है।"

"फिर तीसरा और अन्तिम दृश्य इस बुरे सपने का अजीब ढङ्ग से प्रारम्भ होता है। सावन भादों वाले बड़े कमरे में, जिसकी छत इस प्रकार खुली हुई है, कि रोशनी और हवा तो आती है, लेकिन पानी

नहीं आता। वही बड़ा कमरा, जो बारादरी के ढङ्ग पर बना हुआ है। उस कमरे में लकड़ियों की एक छोटी सी चिता बनी हुई है। और मैं उस पर इसी प्रकार सिंगार किये हुये बैठी हूँ। लाश मेरी गोद में है। आश्चर्य की बात यह, कि तुम मेरे सामने खड़े मुझे इस दशा में देख रहे हो, और मुसुकुरा रहे हो। तुम्हारी आँखें, और तुम्हारा बाँकपन मेरे कलेजे को छलनी किये देता है। मैं उस लाश को अपनी छाती से लगाये हुये तुम्हारी तरफ ऐसे प्रेम के साथ देख रही हूँ, कि ऐसा मालूम हो रहा है, कि मिट जाऊँगी। तुम्हें देखते देखते मैं अपने प्रेम की भावनाओं से बेवस-सी हो जाती हूँ। दिल में सहसा एक विचित्र बेकली की हालत सी पैदा हो जाती है। सारे भाव सिमट कर सीने में एक केन्द्र पर आ जाते हैं और मैं अनुभव करती हूँ, कि अब मुझ में बरदाश्त करने की शक्ति नहीं है। इसी समय सहसा मुझे मालूम होता है, कि मेरा दिल कट गया। आग की चिनगारी, अपने आप भड़ककर इतने जोर से निकलती है, कि चमक मुझे स्वप्न से रहित कर देती है। मैं अपने को बेदम पाती हूँ और सारा शरीर पसीने से लथपथ हो जाता है। इसी समय मुझे बहुत ज्यादा थकावट सी मालूम होती है। देर तक पड़ी रहती हूँ और तुम्हारे प्रेम के विचार दिल को पिघलाये देते हैं। फिर धीरे से उठती हूँ, कि कहीं तुम जाग न उठो! मैं तुम्हारे सुन्दर चेहरे को देखती हूँ और देखते ही देखते जब तुम सगबगाते हो, तो झट अपनी पलङ्ग पर इस प्रकार लेट जाती हूँ, कि आहट तक नहीं होती। आज तुम्हारी सूरत देखते-देखते बेचैनी की दशा में दो आँसू तुम्हारे चेहरे पर टपक पड़े और तुम जाग उठे।"

× × ×

मैं इस सपने से अधिक प्रभावित हुआ। लेकिन मैंने हँसकर महारानी से कहा—तुम भी अजीब बहकी हो। ऐसे ऐसे न जाने कितने सपने दिखाई पड़ते हैं और कुछ नहीं होता ! तू बड़ी नादान है।"

"लेकिन एक ही स्वप्न और वह भी बराबर दिखाई पड़े, तो तबियत क्यों परीशान न हो। एक बात और सुनो ! आखिर क्या कारण है, कि तुम जब कभी दिखाई दिये, तो एक ही लबास में दिखाई दिये। शकल का तो अच्छी तरह ध्यान नहीं, लेकिन हाँ तुम्हारी उम्र सदा इतनी ही दिखाई पड़ी। इस स्वप्न में अवश्य कुछ न कुछ रहस्य है।"—महारानी ने चिन्तित होकर ये शब्द कहे।

मैंने कहा—"तू पागल हो। लाओ, मैं तुम्हारे स्वप्न की व्याख्या कर दूँ।"

महारानी ने कहा—"बताओ !"

मैंने कहा—तुम खूब हँसोगी !

"तुम हर बात में मजाक करते हो।"

"मैं सच कहता हूँ ! इस स्वप्न का यही फल है, कि तुम खूब हँसोगी।" यह कहकर जो मैंने महारानी को पकड़कर गुदगुदाना शुरू किया, तो चूँकि उन्हें गुदगुदी अधिक मालूम होती थी, वे मछली की तरह तड़पने लगीं और मैंने उन्हें हँसाते-हँसाते बेहाल कर दिया।

× × ×

दिन के दस बजे आजान देने वाला हाजिर किया गया। गरीब आदमी था। मैंने उससे कहा, कि एक आजान रात के दो बजे दे दिया करो। मैं तनख्वाह दूँगा। इससे उसने इन्कार कर दिया। इस पर मैंने कहा, कि जिस तरह संभव हो सके, पहले वक्त आजान दिया करो।

वह कहने लगा, कि मैं तो पहले वक्त ही देता हूँ। मैंने उसे वक्त देखने के लिए एक घड़ी दी और पचास रुपये इनाम देकर छुट्टी दी। वास्तव में आजान सवेरे का सन्देश होता है। और इस आजान से आज महारानी के दिल को एक बेहद ताकत-सी मिली थी। इसलिये मैंने कहा, कि यदि आजान जल्दी हो जाय तो अच्छा है।

आजान देने वाला चला गया और अब उसका ध्यान भी न रहा। केवल उसी दिन उसका ध्यान फिर होता, जिस दिन महारानी स्वप्न देखतीं, और हम दोनों को बेचैनी से अजान की प्रतीक्षा होती।

महारानी एक महीने के भीतर चार बार इस स्वप्न को देख चुकीं थीं, कि एक दिन रात में वे स्वप्न देखने के समय घबड़ा कर उठीं और सहसा मुझे जगाकर कहा—"यह तुमने गजब किया।"

मैंने उनके चिन्तित चेहरे को देखा और मुसुकरा कर कहा—पागल हो गई हो ! क्या गजब किया, और कैसा गजब !

"तुमने आजान देने वाले को मरवा डाला।"

मैंने कहा—"न जाने तुम क्या बकती हो ! आखिर बताओ तो सही, आज क्या तमाशा देखा ?"

इस पर उन्होंने एक विचित्र स्वप्न सुनाया। वह यह, कि उसी स्वप्न वाली बला ने आजान देने वाले की तुमसे शिकायत की और तुमने उस दुष्ट बला से कहा, अच्छा उसे मार डालो।"

मैं बड़े जोर से हँसा और महारानी से बोला, कि आखिर तुम्हें यह क्या हो गया है ?" इस पर उन्होंने एक विचित्र ढङ्ग से कहा, कि मैं झूठ नहीं कहती। यह सब स्वप्न······मैं सच कहती हूँ, यह स्वप्न

अवश्य सच होगा। तुम देख लेना, आज अजान की आवाज न सुनाई पड़ेगी।"

सवेरे तक मुझे और महारानी को, अजान के आवाज की प्रतीक्षा रही। ज्यों ज्यों समय बीतता जाता था, महारानी की परेशानी बढ़ती जाती थी। मेरे आश्चर्य की सीमा न रही, जब दिन निकल आया और अजान न हुई। मैंने दिन निकलते ही सवार दौड़ाया, कि पता लगाये, कि अजान देने वालों ने क्यों नहीं आजान दी। मालूम हुआ, कि रात को ही मर गया। उसकी मौत उसी समय हुई, जब महारानी ने मुझसे कहा था। पता चला कि वह परीशान होकर उठा। अपनी बीबी को बुलाया, और बहुत शीघ्र किसी भयानक कष्ट के कारण मर गया। अब मैं विचित्र परीशानी में था। और मैंने शीघ्र सिविल सर्जन को बुलाकर हुक्म दिया, कि उसकी लाश की जाँच करके बताये, कि मौत कैसे हुई? सिविल सर्जन ने रिपोर्ट दी, कि मौत दिल की धड़कन बन्द हो जाने के कारण हुई। सौ रुपये मैंने उसके कफ़न-दफ़न के दिये! मेरी चिन्तित और परीशान आकृत देख महारानी का चेहरा और भी फक़ हो गया और वे शीघ्र जान गईं, कि सचमुच आजान देने वाला मर गया। उन्होंने भर्राई हुई आवाज में कहा—"मैं कहती थी न, कि मेरा स्वप्न सच्चा है। तुमने उसे मरवा डाला।" मैंने ये शब्द सुने और मूर्ति की तरह चुपचाप महारानी को देखता रहा। मुझे ऐसा मालूम हो गया, मानो सचमुच मैंने आजान देने वाले को मरवा डाला। उसके घर आदमी भेज कर सूचना दिलवाई, कि उसकी विधवा को दस रुपये मासिक जीवन पर्यन्त मिलेगा और बच्चे जब बड़े होंगे, उनको पढ़ने के लिए वजीफा अलग से दिया जायगा।

अब मैं और महारानी, दोनों परीशान थे। महारानी ने बहुत ही खैरात किया। अपने नैहर से कई पंडित और मौलवी बुलवाये और दूसरे जगहों से भी बुलवाये और उससे ताबीज़ तथा गण्डे लिए। मैं स्वयं इन ढकोसलों को न मानता हूँ, और न मानता था। लेकिन इस समय हाल ही दूसरा था। इसके अतिरिक्त यह प्रबन्ध किया गया, कि ग्यारह, बारह और एक बजे न सोकर शाम होते ही सोने लगते, और बारह बजे उठ कर संगीत की महफिल लगाते। सबसे अधिक लाभ इस उपाय से हुआ। लेकिन वह जान लेवा स्वप्न ऐसा था, कि किसी न किसी समय थोड़ा-बहुत अवश्य कभी न कभी दिखाई दे जाता था। मतलब, कि रात के बदले दिन को सोते। स्वप्न में बहुत कमी हो गई थी। और फिर चूँकि मेरी शादी निकट आगई थी, इसलिये महारानी का ध्यान कुछ इस तरह इस तरफ खिंचकर आ गया था, कि अगर स्वप्न देखती भी थीं तो उसे कुछ अधिक महत्व न देती थीं।

× × ×

जूनियर महारानी को आखिर ब्याह कर लाना ही पड़ा ! ब्याह की रस्मों में मैंने न तो उन्हें देखा था, और न देखना चाहता था। सीनियर महारानी ने अपनी भतीजी के लिये महल का एक विशेष भाग सजाया था, जिसमें जूनियर महारानी लाकर उतारी गईं। मैं प्रारम्भ से ही महल के उस भाग से जान-बूझकर कतरा कर निकल जाता। क्योंकि उसमें वह लड़की आने वाली थी, जो मेरे और महारानी के प्रेम के बाधक होने वाली थी। मुझे इस विचार-मात्र से ही घृणा थी।

× × ×

रात बीतने पर जब सीनियर महारानी मे सभी रस्मों से छुट्टी पाकर

जूनियर महारानी को उनके शयनागार में भेजवाया तो मेरी खोज की चिन्ता हुई। मालूम हुआ, कि मैं बाहर हूँ। वहाँ पता लगाने पर मालूम हुआ, कि भीतर हूँ। लिहाफ़ और रजाइयों के नीचे खोजा गया। लेकिन मैं भला वहाँ कहाँ मिलता! मैं तो सीनियर महारानी के शयनागार में पड़ा हुआ बेखबर सो रहा था। सोते में मेरे गर्दन पर सीनियर महारानी ने एक चुम्मन लेकर मुझे सावधान किया। मैंने आँखें खोलीं और देखा, कि महारानी के खूबसूरत चेहरे पर मुसुकुराहट नाच रही है। हँसकर उन्होंने कहा—"यहाँ कहाँ?" मैंने उनको गले से लगाकर कहा—"मैं वहाँ, जहाँ मुझे होना चाहिये!" अर्थात् अपनी जान के पास, अपनी प्यारी महारानी के पास।" उन्होंने हाथ पकड़ कर घसीट कर उठाया। इसके बाद ही एक हुज्जत और विवाद का अध्याय खुल गया। मैं हठ कर रहा था, कि मैं हरगिज जूनियर महारानी के पास न जाऊँगा और उनका हठ था, कि जाना पड़ेगा। दोनों के हठ ने तरह-तरह के पहलू धारण किये, जिसका प्रारंभ एक मनोरंजक हँसी से हुई और इसका फल यह हुआ, कि अन्त में हम दोनों खूब रोये; लेकिन उसके बाद भी विवाद जारी था। मतलब कि धक्के देकर जबर्दस्ती इस शयनागार से निकाले गये। मैं रोता जाता था, और महारानी मुझे बहलाती-फुसलाती जाती थीं। तरह-तरह की बातें करके पुचकारती जाती थीं। मुझे बहलाती, फुसलातीं, खींचती, घसीटती वे जूनियर महारानी के शयनागार तक मुझे ले गईं। यहाँ पहुँच कर मैं अड़ गया। मुझे दरवाजे पर छोड़ कर वे अपनी भतीजी को कुछ समझाने-पढ़ाने शयनागार गईं और इधर मैं भागा। और फिर अपने घोंसले में, अर्थात् उसी जगह, जहाँ से घसीट कर लाया

गया था। लेकिन यह सब कुछ बेकार था। मेरे बुरे हाल पर उन्हें कुछ दया न आई ! वे थोड़ी देर बाद मुझे फिर पकड़ कर लाई और जबर्दस्ती धक्का देकर शयनागार में ढकेल कर बाहर से दरवाजा बन्द कर दिया।

मैंने इस कमरे को, जैसा कि कह चुका हूँ, बिलकुल न देखा था। मैंने उसे अब देखा। सारे कमरे में बिजली की सब्ज रोशनी हो रही थी। तरह तरह के झाड़ फानूस और बिजली की सब्ज बल्बें जल रही थीं। कमरे की छत सब्ज बानात की थी, जिस पर तरह-तरह के सुनहले काम बने हुये थे। प्रत्येक चीज मुझे सब्ज ही दिखाई दे रही थी। यहाँ तक कि कालीन भी बिलकुल सब्ज ही रंग का था। सारी दीवारें भी सब्ज थीं। दीवालों को सब्ज रंग के विलायती कागज से मढ़ा गया था और इस सब्ज कागज पर तरह-तरह के चित्र बने हुये थे। कमरे में प्रत्येक तरह का आराम का सामान सजा हुआ था; लेकिन सब सब्ज रंग का था। कमरे के बीचों बीच बिलकुल सोने की दो मसहरियाँ लगी हुई थीं और उनके इधर उधर दीवाल की तरह एक आवेरवाँ का सब्ज रंग का रेशमी पर्दा इस तरह झूल रहा था, कि छत से लेकर जमीन तक, चारों ओर एक दीवाल सी बन गई थी। यह पर्दा इस तरह बारीक और इस तरह नफीस था, जो सब्ज रंग की रोशनी में नाचते हुये से मालूम पड़ रहे थे। उनमें एक मसहरी पर जूनियर महारानी अर्थात् राजकुमारी लीलावती बैठी थीं ! वे भी सब्ज रंग के कपड़ों से सुशोभित थीं और ऐसा मालूम होता था, कि एक सब्ज रंग की घड़ी रक्खी हुई है। यह सब कुछ मैंने एक आँख भर देखा, कि फिर शीघ्र ही सीनियर महारानी के प्रेम को

सोच कर रोने लगा। जूनियर महारानी की तरफ मैंने पीठ करली और मखमल के सब्ज पर्दे में मुँह लपेट कर चुपके-चुपके खूब रोया और खूब दिल की भड़ास निकाली। खूब रोने से तबीयत कुछ हल्की हुई। दूसरी तरह-तरह की सुगन्धी से कमरा वैसे ही महक रहा था, कि सहसा एक विचित्र, तेज, और मस्त करने वाली खुशबू का झोंका मेरे दिमाग में लगा। मैंने घबड़ा कर मुँह खोल दिया मुड़कर जो देखता हूँ, तो जूनियर महारानी हैं, जो इत्र में बसी हुई थीं। सब्ज रंग का रूसी कालीन था, जिस पर इतना बड़ा बड़ा रोआँ था, कि टखनों तक पैर उसमें घुस जाता था। इस कारण से उनके आने की रंचमात्र भी आहट न हुई। मुझे देखते ही उन्होंने झुककर मेरे कदम चूमे। मेरे पैर चूम कर उन्होंने खड़े होकर दोनों हाथ जोड़कर झुककर मस्तक पर रक्खे और कुछ हटकर इस प्रकार हाथ जोड़ कर दृष्टि नीचे किये हुये खड़ी हो गईं। मतलब कि सौन्दर्य की इस चिनगारी को मैंने सिर से पैर तक पहली बार देखा। खूबसूरत सूरत नाजुक बदन, और आग का सा रंग था। चेहरा साफ बिल्लौर की तरह, मानों सब्ज रोशनी में जगमगा रहा था जिस पर सुनहला पाउडर चमक रहा था। केवल थोड़ा सा मस्तक रस्मी घूँघट से छिपा हुआ था। नाक की बनावट ऐसी सुन्दर कि मैंने कभी देखा न था। मैंने एक नजर देखा, और फिर देखा। मैं चुपचाप था, और वे इसी प्रकार हाथ जोड़े हुये खड़ी थीं। मैं पर्दा पकड़े हुये खड़ा था। उन्होंने आगे बढ़कर घुटने टेक कर मेरे पैर छुये और फिर अलग हटकर उसी तरह खड़ी हो गईं। मैं उसी प्रकार खड़ा होकर इस कवायद को देखता रहा, कि वे फिर तीसरी बार झुकीं। उन्होंने उसी

तरह झुककर मेरे पैर अपने लबों, आँखों और मस्तक से लगाये लेकिन इस बार वे उठकर अलग नहीं खड़ी हुईं, बल्कि उन्होंने मुँह ऊपर करके मेरी ओर देखा। मुझे दिल में कहना पड़ा—"भगवान ने तुझे गजब की सुन्दरता दी है। लेकिन······।" वे मेरी तरफ देख रही थीं, और दोनों हाथ जोड़े हुये थीं! उनके लबों पर कुछ कम्पन सा भी था, जैसे कि वे कुछ कहना चाहती हैं, कि उन्होंने अपना दाहिना हाथ मेरे बाँयें हाथ की तरफ बढ़ाया। उनका सब्ज रंग का काश्मीरी शाल उनके सिर और कन्धे पर से खिसक कर गिर गया, लेकिन उन्हें शायद खबर भी न हुई। हाथ बढ़ा कर जैसे डरते-डरते उन्होंने मेरा बाँया हाथ कलाई पर से पकड़ लिया और दोनों हाथों से पकड़ कर उसे आँखों से लगाया। और फिर काँपती हुई आवाज से कहा—"पति महाराज!" मेरी तरफ उन्होंने नम्रता से भरी हुई दृष्टि से देखा। ऐसा मालूम हुआ, मानों मुझसे दया और क्षमा की इच्छुक थीं। धीरे-धीरे उठीं, और पूर्व इसके, कि मुझे पता चले कि क्या हुआ, उन्होंने मुझे मसहरी पर ला बैठाया और हाथ जोड़कर सामने खड़ी होगईं। सारी मसहरी इत्र से बिलकुल बसी हुई थी। मैं उस पर बैठा हुआ जूनियर महारानी को देख रहा था। जो सब्ज रङ्ग की आबेरवाँ की साड़ी पहने हुये मेरे सामने खड़ी होकर मेरी पूजा कर रही थीं। दिसम्बर की तेज सर्दी थी। लेकिन कमरे में भीतर बहुत ही सुन्दर मौसम था। क्योंकि जगह-जगह बिजली की अंगीठियाँ दमक रही थीं।

मैंने उन्हें बैठने का संकेत किया तो वे मेरे पैर को छूकर बैठ गईं फिर शीघ्र उन्होंने एक सब्ज रङ्ग की सुराही से दो प्याला भर कर

मुझे दिये, जिन्हें मैंने पी लिया। और एक प्याला उन्हें देकर इस रस्म को पूरा किया।

बहुत शीघ्र दो-चार बातें हुईं कि बात का सिलसिला जारी होगया और जूनियर महारानी ने अपनी जादू का जाल मेरे ऊपर फेंकना शुरू कर दिया। अपनी तबीयत को क्या करूँ? मैं झल्ला-सा गया और उन्हें शायद बुरा मालूम हुआ। जब मुझे सीनियर महारानी का ध्यान आया, और मैंने बात काट कर कहा—"सो जाओ" और यह कहकर अपनी मसहरी पर जो लम्बी तान कर सोया तो फिर सबेरे ही साँस ली। साढ़े आठ बजे होंगे, जब सीनियर महारानी ने मुझे उठाया, और शीघ्र लड़ाई शुरू कर दी। मैं खूब-खूब रोया, और वे भी खूब-खूब रोईं। मैं भी विवश था, और वे विवश थीं। वास्तव में भतीजी ने मेरी कठोरता की शिकायत की थी और फूफी अपनी भतीजी की तरफ से वकील होकर सम्मिलित पति से लड़ने आई थीं। मतलब, कि सीनियर महारानी से खूब लड़ाई हुई।

× × ×

किसी ने कहा है, और ठीक कहा है, कि आग लगे धुँआ न हो। जूनियर महारानी का सौंदर्य अपूर्व और फिर फूफी भतीजी, दोनों की कोशिश। चाहे जिस तरह से, मैं जूनियर महारानी से घुल-मिल गया। लेकिन मुझे मालूम न था, कि घुलना-मिलना कुछ का कुछ कर देगा और वह भी इस प्रकार जल्द।

फूफी तो जैसा गाती थी, गाती थी ही, लेकिन भतीजी तो गाने में और भी अधिक अभ्यस्त थीं। इतनी सुंदर और आकर्षक लड़की नई नई जवानी और फिर नई शादी। मेरा उसकी ओर से खिंचाव, और

उसका मेरी ओर सम्मान। क्या कहूँ, कि जूनियर महारानी क्या हो गईं। वे मुझसे मिल कर प्रेम और आसक्ति की साक्षात् पुतली बन गईं। एक विचित्र हालत में थीं, और फिर मुझे भी अपने साथ खींचे लिये जा रही थीं। उनका वश न था कि मुझे अपने दिल में छिपा लेतीं। आखिर यही भाव तो सीनियर महारानी में भी थे। और औरतों में होते ही हैं। लेकिन जूनियर महारानी में न तो इतनी समझ, कि ये भाव क्या हैं, और न बुद्धि। वे मुझे देखतीं तो उनकी आँखें चुगुलखोरी करतीं! उनकी क्रियायें, उनकी बातें, उठना, बैठना, चलना फिरना, खाना, पीना, हँसना, गाना, मिलना-जुलना, मतलब, कि उनके सभी काम भाव के मातहत में थे, और प्रत्येक पग पर अपने दिल के चोट का भेद प्रगट करते थे। बस, मानों जूनियर महारानी क्या थीं, कि आग और पारा थीं। बल्कि इस प्रकार कहिये, कि एक दहकता हुआ आग का अङ्गार! बहुत शीघ्र उन्होंने मेरी हस्ती को कुछ का कुछ कर दिया। वे स्वयं मिट गईं और मुझे भी मिटा दिया। या यों कहना चाहिये, कि मुझे भी पागल बना दिया। जरा सोचिये तो, सीनियर महारानी इन सब बातों और अपनी भतीजी की जिन्दादिली को देखती और बहुत प्रसन्न होतीं और जहाँ तक सम्भव होता, अपनी भतीजी के ऐश में दखल न देतीं।

वही नाच रङ्ग की महफिलें, और वही रङ्ग-रेलियाँ! जूनियर महारानी और सीनियर महारानी, दोनों मेरे साथ होतीं। फूफी और भतीजी, दोनों मिलकर खूब गातीं! जल्से में दोनों शामिल होतीं! तरह-तरह के नाटक खेले जाते, स्वाँग बनाये जाते, सीनियर महारानी राजा बनतीं, जूनियर महारानी राजकुमार बनतीं और

मैं राजकुमारी बनाया जाता। मेरे साथ शादी होती। खूब-खूब उल्टी गङ्गा बहाई जाती; लेकिन सीनियर महारानी का यह हाल अधिक दिन तक न रहा। वैसे भी अपनी भतीजी पर अपना सुख पग पग पर स्वयं निछावर करती थीं। लेकिन बहुत शीघ्र उन्होंने अपने आप इन जल्सों से दूर रहना प्रारम्भ कर दिया। कभी सिर के दर्द का बहाना, कभी तबीयत की खराबी, कभी नींद की अभिलाषा! और कभी दिलचस्पी का अभाव। मतलब, कि कोई न कोई बहाना महफिल से उन्हें जल्द उठा देता! धीरे-धीरे उन्होंने नागा करना प्रारम्भ कर दिया। वास्तव में उनके मन का रुझान कुछ पूजा-पाठ की ओर अधिक हो गया था। मैंने समझा, कि शायद यह इसका कारण हो!

प्रगट है, कि इन सभी बातों का क्या परिणाम होगा! मैं अपने को भूलकर जूनियर महारानी में डूब गया। अब मुझे मालूम हुआ, कि सीनियर महारनी ने सच कहा था, कि जूनियर महारानी मेरे जोड़ की है।

मेरी उम्र सोलह और सत्रह साल के बीच थी, और जूनियर महारानी की पन्द्रह और चौदह के बीच में। बहुत शीघ्र मुझे सीनियर महारानी की जगह पर जूनियर महारानी का ख्याल हो गया। हमेशा वही तसवीर सामने रहती, ! भीतर हूँ, चाहे बाहर, । सोते-जागते उन्हीं की याद रहती, धीरे-धीरे ऐसी शिक्षा ग्रहण करने योग्य दशा आ पहुँची, कि सीनियर महारानी का रहना और न रहना एक-सा मालूम होने लगा। और फिर यहीं तक समाप्ति नहीं, बल्कि एक कदम और भी आगे बढ़ा और सीनियर महारानी की उपस्थिति, आकर्षक-हीन होकर दुखदाई मालूम होने लगी। ऐसा मालूम होने

लगा, कि ये तो कोई बुजुर्ग हैं। वे खुद खिंची-खिंचीं दिखाई देतीं! थोड़े ही दिनों में नाच-रङ्ग की बहार केवल जूनियर महारानी रह गईं। वही झील का किनारा, सङ्गमरमर का वही चबूतरा, वही हँसती हुई मौन चाँदनी, और वही रास-रङ्ग! लेकिन अब पुराना प्रेमी मजलिसों में मौजूद न रहता। अब मेरे ध्यान में एक दूसरी मूर्ति थी, जिसकी सृष्टि ने उसके बे जोड़ होने का डङ्का बजवा दिया था। कभी कभी मेरा दिल मेरे ऊपर घृणा करता, और सीनियर महरानी का ध्यान कष्ट देता। लेकिन इसमें रञ्चमात्र भी मेरा अपराध न था। अगर सीनि-यर महारानी के यहाँ इस विचार से जाऊँ, कि रात को उन्हीं के यहाँ रहूँ, और वहीं जल्सा हो तो वे मुझे टिकने न देतीं और हँस-हँसकर लड़तीं और धक्के देकर निकाल देतीं। और जब बड़ी मुश्किल से तैयार ही होतीं तो बहुत शीघ्र कहतीं, कि लीलावती को भी बुला लो।" जूनियर महा-रानी शीघ्र आ जातीं! वास्तव में उनकी मजाल न थी, कि अस्वीकार करें। उनके आते ही अपने आप इनके सिर में दर्द होने लगता और परिणाम यह होता, कि सीनियर महारानी के महल में स्वयं उनकी अनु-पस्थिति हो जाती और केवल जूनियर महारानो रह जातीं। लेकिन जूनियर महारानी का खब्त होते हुये भी मुझे ऐसा मालूम होता था, कि सीनियर महारानी का प्रेम एक अपूर्व वस्तु है। मेरे दिल में अब भी उनकी बेहद चाह थी। लेकिन इसकी एक विचित्र ही हालत थी। जब कभी उन्हें सीने से लगाता, या उनका मस्तक चूमता तो उनके आँसू निकल पड़ते और बहुत शीघ्र हालत बिगड़ जाती और हिच-कियाँ बँध जातीं। मानों एक प्रकार से उन्होंने मेरे लिये प्रेम प्रगट करना ही असंभव सा कर दिया। क्योंकि उनकी हालत ऐसी बिगड़

जाती, कि सँभालना कठिन हो जाता। उनसे कभी अगर उस बुरे स्वप्न का हाल पूछता तो वह बड़ी निश्चिन्तता प्रगट करतीं ! कभी-कभी नहीं, बल्कि ऐसा प्रायः दिखाई देता था। लेकिन अब वे स्वयं मुझसे कहती थीं; कि केवल वहम है और दूसरी बातें करो। मैं रह-रहकर यह भी सोचता था, कि आखिर यह किस ढङ्ग का प्रेम है, जो मुझे सीनियर महारानी से है। क्योंकि जूनियर महारानी का प्रेम अगर एक ओर प्राण लेने वाला था, तो दूसरी तरफ सीनियर महारानी के लिये दिल टुकड़े-टुकड़े हुआ जाता था। और उनकी भोली भाली आँखें दिल में तराजू सी रह जाती थीं; वास्तव में मेरा जी चाहता था, कि सीनियर महारानी पर अपनी जान निछावर करता रहूँ।

× × ×

धीरे धीरे सीनियर महारानी की दशा में एक बहुत बड़ा परिवर्तन पैदा हो रहा था। वे अधिकतर चुप रहती थीं। मालूम हुआ, कि रात में भी उठकर टहलती हैं। उनके चेहरे की वह असाधारण ज्योति अब मुरझाई हुई थी। लेकिन चेहरे पर अब भी एक ऐसी सुन्दरता मौजूद थी, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। जब उनके बालों में वह सुगंधित और चमकदार पाउडर भी न था, जिसकी उनके सुन्दर चेहरे पर वर्षा सी होती रहती थी। उनकी तन्दुरुस्ती भी अब पहले से बुरी मालूम होती थी और वे दुबली हो गई थीं।

× × ×

वास्तव में आदमी सुखों का अनुचर है, चाहे अमीर हो, चाहे गरीब। फिर सुखों और विलासों की भी कोई सीमा नहीं। हम सब लोग चाहे कितना ही आराम क्यों न करें; यही समझते हैं, कि पर्याप्त

नहीं हैं। मेरी और जूनियर महारानी के सुख और चैन से भरे हुये दिन पलों की तरह बीतते मालूम होते थे। यह मालूम होता था, कि हम दोनों एक मस्त हवा में, संसार के आनन्दों में डूबे हुये इससे भी अच्छे किसी स्थान को जा रहे हैं। मेरी शादी का दूसरा साल प्रारम्भ हो चुका था। लेकिन ऐसा मालूम होता था, कि जूनियर महारानी मानों कल ही आई हैं। ज्यों ज्यों जवानी आती जाती थी, प्रेम और आसक्ति अधिक बढ़ती जाती थी। वास्तवमें मैं एक विचित्र उन्माद में डूबा हुआ था और यही हाल जूनियर महारानी का भी था।

× × ×

बरसात का मौसम आया। काले-काले बादल, दिल को खुश करने वाली हवायें। झील का किनारा, और एकान्त और इस पर प्रेम और आसक्ति का उफान! दिन रात खेल तमाशे में ही बीतते थे। और दिन रात तरह-तरह के नाच तथा रङ्गरलियाँ मनाई जाती थीं। रोज नई सलाह और उसकी पूर्ति! बस जीवन का उद्देश्य ही यही था। जूनियर महारानी ने सलाह दी, कि झील के बीचो बीच में नावें जोड़ कर या किसी दूसरी तरह एक द्वीप बनाया जाय। और उस पर एक अस्थायी बारादरी बनाई जाय और वहाँ एक शानदार [illegible] जलसा हो। दिन रात वहीं रहें। सलाह [illegible] बहुत ही मनोरञ्जक थी! हुक्म की देर थी, कि सैकड़ों आदमी लग गये। दिन रात काम होने लगा और पन्द्रह बीस दिन के बाद यह नकली महल बनकर तैयार हो गया। प्रथम जल्स के ही दिन झील के चारों तरफ झमाझम पानी बरस रहा था और यहाँ महारानी का यह हाल था, कि अपनी मस्त कर देने वाली आवाज से झूम-झूमकर रूम-झूम गा रही थीं। खूब

माल फूये खाये और तरह-तरह की शरावें लुढ़काईं। दिन को सोते और रात भर रङ्गरलियाँ मचाई जातीं। तरह-तरह के नाच होते और तरह-तरह के नाटक किये जाते। फिर कभी बरसते हुये पानी में नहाते और कभी झाल में, मतलब, कि खूब धूम-चौकड़ी रही। इस ऐश और आराम के जल्से में अधिक हठ करने पर भी सीनियर महारानी नहीं आईं। "तुम जाओ।" उन्होंने कहा—'लीलावती है तो।" इसके जवाब में मैंने उन्हें छाती से लगाया। और कहा—"नहीं, तुमको जरूर ले चलूँगा।" बस यह कहना, कि मानों बिखर गईं। खूब रोईं, और मुझको भी रुलाया। विवश होकर चला आया। अब इस जल्से में उनकी मौजूदगी का विचार तक न था। वास्तव में अवकाश ही कहाँ था?

नाच-कूद से भी चार-छः दिन में परीशान से हो गये कि अन्तिम दिन आ गया और यह सोचा गया, कि बस, आज का जल्सा और हो; और कल खतम! खूबी यह, कि बादल भी उमड़ कर ऐसे घिर आये, कि आकाश और पहाड़ एक हो गया। और फिर वर्षा भी खूब-खूब हुई! बिजली की तरह-तरह की रोशनी से दिन हो रहा था। दिल को फड़का देने वाली आनन्ददायक हवाओं के झोंके आ रहे थे। और धूम का नृत्य विचित्र ढङ्ग से हो रहा था। खूबसूरत और चुलबुली नर्तकियाँ नशे की तरंग में बदमस्त होकर अपनी सुरीली आवाज मिला कर फूलों के हार पहने और हाथों में मोर पंखड़ी की सब्ज साखें लिये बल खा-खाकर साज की थाप पर झमाके के साथ कदम मिला-मिला कर नाच रही थी। जूनियर महारानी ताल पर ताल दे रही थीं! खुदा ने, उन्हें गजब की खूबसूरती दी है। उनके जरी के कपड़े और उस पर

कलँगीदार टोपी जवाहिरों से जगमगा रही थीं। मेरा दिल छीने लेती थी। खुशी और उमङ्ग से उनका सुन्दर चेहरा चमक रहा था। और उस पर वह लम्बी लम्बी दिल खींचने वाली तानें और फिर रूम-झूम के गीत और फिर रूम-झूम के गीत पर उनका स्वयं झूमना और धूम के नाच का नया-तुला झमाका, जिसके साथ उनके सुन्दर चेहरे पर सुगंधित और चमकदार पाउडर की वर्षा होती थी। आज रात का अन्तिम जल्सा था। घड़े के घड़े शराब खाली हो रहे थे। "और पिओ और पिओ" गाने वालियाँ, बजाने वालियाँ, महारानी, और नर्तकियाँ सभी नशे में चूर थीं। प्याला पर प्याला खाली हो रहा था। "और लाओ" की कमी न होती थी। मैं भी इसी बाढ़ में बहा जा रहा था। संक्षेपतः यह कि हर एक ने इतनी पी कि अक्ल और होश गायब! बहुत शीघ्र महफिल का क्रम बिगड़ गया। किसी ने किसी की चोटी पकड़ी, किसी ने किसी को घसीटा, मैंने स्वयं अधिक कोशिश की, कि सँभलूँ, और जल्से की अस्त व्यस्तता को सँभालूँ, लेकिन वहाँ तो प्रत्येक नर्तकी अपने को महारानी समझ रही थी। कोई इधर गिरा, कोई उधर गिरा। रात के दो वैसे ही बज चुके थे। हफ़्ते भर की कूद-फाँद और फिर नशा, और उस पर जवानी की नींद। थोड़े ही देर में मुर्दनी फैल गई। जो जहाँ था, वहीं पड़कर चित्त हो गया। नशा और नींद ने ऐसा दबाया, कि सब बेहोश हो गये।

× × ×

नींद और नशे की हालत में मैंने एक स्वप्न देखा। वही स्वप्न, जो सीनियर महारानी को दिखाई दिया करता था। क्या देखता हूँ, कि मैं दरबार वाले कमरे की तरफ जा रहा हूँ। वहाँ पहुँचा तो अक्षरशः

वही दृश्य मौजूद था। वही महारानी और वही कमरा। मतलब, कि जो कुछ भी उन्होंने देखा, सब वही। वे बनी सजी बैठी हुई थीं। केवल अन्तर इतना था, कि वहाँ वह मुसीबत नहीं थी जिसको महारानी ने देखा था, बल्कि वहाँ तो मेरी प्यारी जूनियर महारानी थी, जो मुसुकुराती हुई सीनियर महारानी से कह रही थी "कि तू बेवा हो गई। चिता में बैठ।" इसी समय मैं पहुँचा। मैंने जूनियर महारानी से पूछा, कि क्या बात है? उसने मुझसे मुसुकुराकर कहा—"सीनियर महारानी बेवा हो गई।" मैंने जूनियर महारानी को देखा, और फिर सीनियर महारानी को देखा, और कहा—"तू बेवा हो गई और सती हो जा।" इतने में देखता हूँ तो जूनियर महारानी गायब! फिर स्वप्न का दूसरा दृश्य देखा कि सीनियर महारानी मेरा जनाजा देख रही हैं, और मैं भी देख रहा हूँ। मैंने जनाजा पर से कपड़ा हटाकर स्वयं अपनी लाश को देखा और रञ्चमात्र भी आश्चर्य न किया। मतलब, कि स्वप्न का दृश्य भी अक्षरशः वही था।

फिर उसके बाद तीसरा दृश्य देखा। क्या देखता हूँ कि सावन-भादों वाले महल के बड़े कमरे में खड़ा हूँ। सामने सीनियर महारानी मेरी लाश को गोद में लिये सातों सिङ्गार किये हुये सती होने को तैयार बैठी हैं। वे मेरी तरफ देख रही थीं और मैं उनकी तरफ। वे प्रेम से, मुझे अपनी तरफ, मानों आँखों ही आँखों से खींचे ले रही थीं और मेरे दिल में डूबी जा रही थीं। मैं देख रहा था, कि प्रेम के अपरिमित भाव उनके सीने में घुट रहे हैं। इसी प्रकार देखते-देखते उनकी हालत भावों की अधिकता के कारण बेकाबू हो गई और मेरे देखते ही देखते उनके 'सत्त' के जोर से उनके सीने से एक जबर्दस्त आग भड़ककर

इतने जोर से निकली, कि उसने महारानी समेत सारी चित्ता को लपेट लिया। मेरी आँखें चौंधियाँ गईं और पलक मारते इतने जोर का कड़ाका हुआ, कि बादल की गरज के साथ ही साथ मैं भी गिरने को हुआ कि मेरे पहलू से चीख निकल पड़ी और जूनियर महारानी मुझसे आकर चिपट गईं। हम दोनों बादल की गरज के साथ साथ गिरे।

"तुम यहाँ कहाँ ?"—जूनियर महारानी ने मुझसे पूछा।'

"कहाँ ?" मैंने घबड़ाकर चारों तरफ आँखें मल कर देखा।

"अरे !'—यह कहकर महारानी ने एक चीख मारी। और साथ ही मैंने अपने होश हवास में देखा, कि मेरा स्वप्न बिलकुल सफल था। सीनियर महारानी सामने बेजान पड़ी थीं। उन पर बिजली गिरी थी। उनके सीने और बालों पर आग का झुलसा मौजूद था। उनकी गोद में मेरी वही रङ्गीन तसवीर थी। जूनियर महारानी बेहोश होकर गिर गई थीं और मैंने देखा भी न था।

× × ×

मल्लाह कहता है, कि वह रात में मेरे हुक्म से मुझे झील के नकली द्वीप से चबूतरे तक लाया। यात्रा का प्रबन्ध करनेवाला कहता है, कि हुजूर ने अपने दरबारी कपड़े मुझसे रात में माँगे, और मैंने सभी दरबारी कपड़े और गहने स्वयं पहनाये। फिर दूसरे नौकर कहते हैं, कि आपने अपने हुक्म से हमसे लकड़ी की चिता बनवाई। सभी यही कहते हैं, लेकिन मुझे नहीं मालूम, कि मैं कब आया और किस प्रकार आया।

× × ×

महारानी रामावती एक मीठा स्वप्न देख रही थीं, और आँख जो

खुली, तो कुछ भी न था । या फिर इस प्रकार कहिये, कि एक रंगीन प्रेम, जिसकी संक्षिप्त जिन्दगी एक हलकोर से खतम हो गई । एक पतङ्ग था, जो थोड़ी देर दीपक से खेलने के पश्चात् उस पर निछावर होगया।

थोड़े दिन तक तो सिर पीटता और धूलि उड़ाता रहा, और जूनियर महारानी का भी अपनी फूफी के शोक में यही हाल रहा । रात में भी मुझे स्वप्न में दिखाई देतीं और मैं, हाय रामावती कहकर चीख उठता, लेकिन समय बीतने लगा, और बीतता ही गया । वही महल वही झील, वही जूनियर महारानी, और वही रङ्गरेलियाँ, हैं । सीनियर महारानी की याद गुजरे हुये दिनों की एक कहानी हो गई है !

खतों की दिल्लगी

बीबी भी कैसा मधुर और जादू से भरा हुआ आनन्द है, जो एक नवजवान को सच्चाई के फन्दों से निकालकर बिलकुल बेवकूफी की शान्ति से भरे हुये वायुमण्डल में ले जाता है।

नवजवानी......जवानी और तकलीफ......नवजवानी और भड़कता हुआ दिल। भड़कते हुये भाव ! यह सब किसके लिये हैं।

नवजवानी !......एक नवजवान, और जिन्दादिल की रोमांचकारी कँपकँपी किसके लिये है ? मतलब यह कि सारी चीजें शायद एक प्यारी और हृदय को बहुत ही प्रिय लगने वाली बीवी के लिये हैं ! बीबी ! वह जो आदमी को अपने अमर प्रेम से ईश्वर के पास पहुँचा देती है। बहुत से 'ईश्वर के नगर' पहुँच भी गये। इसीलिए कि नव-जवनों को देखिये, तो वह एक प्रिय और मधुर बीवी की खोज में इधर-से उधर परीशान फिरते हैं। इतनी कोशिश करते हैं, कि अगर उसकी आधी मिहनत रूस के जार का सिंहासन प्राप्त करने में करते तो आज बोल्शेविज्म का रोना ही न होता।

× × ×

[१]

यह उस समय की बात है, जब कि मेरा भी यही हाल था। बीवी और बादशाहत में कोई बहुत बड़ा अन्तर ही समझ में नहीं आता था। यह तो बाद में मालूम हुआ, कि प्यारी तो दोनों ही चीजें हैं,

लेकिन दोनों में बड़ा फरक है। एक लड़ने से मिलती है, लेकिन स्वयं नहीं लड़ती, लेकिन दूसरी लड़ने से नहीं मिलती, लेकिन स्वयं खूब लड़ती है। संक्षेपतः मेरा मतलब यह है, कि जिस समय की कहानी सुनाना चाहता हूँ, उन दिनों बीवी के मसले पर मुझे बहुत ही सोच-विचार करना पड़ता था। ईश्वर के नाम पर जरा सोचिये! सबेरे का सुहावना समय है……प्यारी-प्यारी हवा चल रही है। आराम कुर्सी पर लेटा हुआ आँखें आधी खुली और आधी बन्द! भावों में डूबा हुआ हूँ, या बीवी की प्रिय और मधुर कल्पना दिमाग में छाई हुई है। दुनिया एक जादू से भरा हुआ स्वप्न है! सोते जागते का, हृदय खींचने वाला संसार!……बच्चों के छोटे झूले की तरह हिलना शुरू कर दें……हिलना……मक्खियों की भिनभिनाहट……अहा हा मुर्गियाँ बीवियों की तरह टहलती दिखाई दे रही हैं। मुर्गियों पर अपने का प्रिय धोखा हो रहा है। हर चीज रङ्ग से भरी हुई……तैरती सी जान पड़ रही है। देखते देखते सारा मैदान बीवियों से भर गया।……बीवियाँ ही बीवियाँ!…… बीवियाँ ही बीवियाँ! पच्चीस सौ बीबियाँ!…या मेरे ईश्वर!

दिमागी कल्पना ने ऐसी दैवी मंजिल पर पहुँचा दिया, कि दुनिया की छोटी-सी-छोटी चीज भी बीवी दिखाई देने लगी। मानवी सृष्टि! मालूम हुई, कि स्वयं एक मोटी सी बीवी है।

जरा सोचियेगा, कि कहाँ यह आनन्द का समुद्र, मधुर स्वप्न, और कहाँ उसका यह हृदय कँपा देने वाला वर्णन, कि दिया जो मेरे सिर पर हुनक कर एक लट्ठ "अलसलाम् आले कुम" का तो सारा दिमाग ही टुकड़े-टुकड़े हो गया। हड़बड़ाकर जो देखता हूँ तो या मेरे

ईश्वर······बीवी······दाढ़ीदार······सफेद······हो न हो······
लाहौल विलकूह ! एक पूरे मियाँ साहब हैं, जो बीवी की मधुर कल्पना और स्वप्न के भयानक परिणाम स्वरूप आ मौजूद हुये। अब यहाँ यह साबित करने की जरूरत नहीं, कि बीवी की मधुर कल्पना और साक्षात् एक दाढ़ीदार के ठोस और भयानक अस्तित्व में बहुत बड़ा अन्तर है। इतना, कि अगर ध्यान से दाढ़ी देख ली जाय तो फिर यह हो नहीं सकता, कि आप आँखें बन्द करके बीवी के बारे में सोच सकें। फिर मजेदार बात यह सुनिये, कि बड़े मियाँ की बातें शादी के सम्बन्ध में। बस, जी में आया, कि इनका और अपना सिर पकड़ कर टकरा दिया जाय, जिससे इनको मालूम हो, कि इस नई बात का भी दुनिया में कोई इलाज है, कि नवजवान को बीवी न मिल सकने के बारे में भविष्य भाषण किये चले जाओ—मार डालो न झगड़ा, खतम हो जाय।

ये बड़े मियाँ मेरे कान में लकड़ी में छेद करने वाले बरमे की तरह कह ही रहे थे, कि एक देवदूत आया—पोस्टमैन। चिट्ठी लाया, जिससे बड़े मियाँ कातिल बन गये। दरवाजा इतने जोर के साथ खुला, कि कह नहीं सकता उस असफल कोशिश को। यहाँ केवल सरसरी तौर पर इन शब्दों में दुहराना है, कि एक आदमी ने, जिसका नाम इजाज अली था, और जो एक बहुत ही अमीर घराने का आदमी था, अपनी छोटी बहन के विवाह का न केवल विज्ञापन ही दिया, बल्कि इसके लिये मेरा चुनाव भी किया, और टुण्डले के स्टेशन पर मुझे देखने के बहाने से बुलाकर बेवकूफ बनाकर, और मजाक उड़ा कर ऐसा लौटाया, उम्र कि भर न भूलूँगा। इस असफलता का चित्र

खींचना यहाँ उद्देश्य नहीं, केवल इजाज अली से परिचित कराना था, जिसने अपने मनोरञ्जन के लिये मुझे बेवकूफ बनाया।

[२]

शादी की इस असफल कोशिश के बाद जी तो यही चाहता था कि इस मधुर उम्र को अकेले रह करके ही बिता दें, लेकिन सौभाग्य कहिये, या दुर्भाग्य से अचानक कानों में यह आवाज पड़ी—

अगर पहले हमले में शादी न हो;
किये जाओ कोशिश मेरे दोस्तों!

और इस तैमूरी बुद्धि ने मेरे अच्छे काम को यद्यपि कोड़ा तो नहीं लगाया; लेकिन यह बात जरूर है कि जिन्दगी के चिन्हों को बिलकुल मिटने न दिये। इसी से वो मनोरञ्जन समझिये, या मनोरञ्जनहीन समझिये, आज एक कहानी सुनाने की नौबत आती है।

मेरी पहली हार ऐसी थी, कि कोई नवजवान आसानी से भूल जाता; और खासकर ऐसी हालत में जब कि यार दोस्त और मुहल्ले वाले इस अप्रिय घटना को हमेशा ताजी बनाने की फिक्र में रहें। इस घटना के बाद ही की बात है, कि इस असफलता के सम्बन्ध में मेरा पत्रव्यवहार एक ऐसी स्पष्ट विचार और जिन्दादिल अमीर लड़की से हुआ जिनकी किसी कदरदान के साथ जबरदस्ती शादी की जा रही थी। और जिस तरह यह बात सच है, कि अगर किसी बातूनी आदमी को ठोंकिये और जेल भेज दीजिये, तो वह लीडर बन जाता है, उसी तरह यह भी सच है, कि अगर किसी खूबसूरत लड़की की उसकी पसन्द के बिना शादी कर दो तो वह जाति का सुधार करने वाली बन जाती है। इन जिन्दादिल अमीरजादी से पत्रव्यवहार मेरे एक गहरे और सच्चे

दोस्त के द्वारा हुआ। शायद जनाब को मालूम होगा कि ईश्वर ने मनुष्य को अनेक अच्छी चीजें दी हैं। एक चहेती बीबी से आँखें तोड़-कर देखा जाय तो इन्हीं नियामतों में मौत और रोजी भी हैं; जो किसी की राह नहीं देखती। साफ बात है, कि सब को सब नियामतें मिलने से रहीं, लेकिन कहना यह है, कि इन को नियामती अर्थात रोजी और मौत से जब आदमी निराश हो जाता है, तो आमतौर पर या तो वह एडी-टरी करेगा; और या फिर वकालत, अतः मेरे दोस्त को जब भूख लगती ही चली गई तो उन्होंने एडीटरी की। और वहुत जल्द ही उन्हें 'स्त्रियों का पक्षपाती' भी बनना पड़ा! जी हाँ स्त्रियों का पक्षपाती, आप ने शायद देखा होगा, कि जो बड़े बड़े बैल दोनों हैं! उनके सींग लंबे लंबे होते हैं! लेकिन वे किसी को मारते नहीं! जब मक्खियाँ उनकी नाक में फुटबाल टूर्नामेन्ट शुरू कर देती हैं; तब बहुत किया तो थोड़ा कान हिला दिया। वास्तव में वे औरतों के हामी होते हैं और उन्हीं के कन्धों पर औरतों के हामीपने का छकड़ा चलता है।

उनके अखबार की ये अमीरजादी लेखिका थीं। उन्होंने अखबार में एक कहानी लिखी जिसका मतलब यह था, कि मर्दों को चाहिए कि लड़कियों से जबरदस्ती शादी करना छोड़ दें। और माँ-बाप को चाहिये कि लड़की की राय के बिना उसकी शादी न करें। यह कहानी इसी पवित्र उद्देश्य को लेकर लिखी गई थी। सारी कहानी इन्हीं बातों से भरी हुई थी, कि माँ बाप और जबरदस्ती शादी करने वाले कान खोल कर सुनलें, कि अगर लड़कियों के साथ इस ढंग का बरताव किया गया तो वे सब की सब घुल-घुल कर मर जायँगीं। इन कहानी लिखने वाली अमीरज़ादी का नाम 'ब' था।

इसी अखबार के मेरे ही समान मूर्ख एक और भी लेखक थे! उनका नाम और पता जो कुछ भी था, वह केवल "रशीदी" था। इन हजरत ने 'ब' साहिबा की कहानी की समालोचना की, और इस समालोचना वाले लेख को पढ़ कर 'ब' साहिबा ने एक जोरदार पत्र "रशीदी' साहब को लिखा। पता तो मालूम नहीं था, एडीटर साहब के पास भेज दिया, कि रशीदी साहब के पास पहुँचा दें। लेकिन चूँकि, रशीदी साहब का पता स्वयं एडीटर साहब भी न जानते थे। इसलिये यह पत्र उसकी मेज पर रक्खा रहा।

टूँडला की ट्रेजडी से निराश होकर वापस लौट रहा था। रास्ते में दिन भर के लिये इन गहरे दोस्त से मिला और बातों ही बातों में उस पत्र की बात चीत चली। मैंने उनसे यह कह कर पत्र ले लिया, कि चूँकि मेरे और रशीदी साहब के विचार मिलते जुलते हैं इसलिये अच्छा होगा कि पत्र मुझे दे दो। इस तरह जब मुहल्ले वालों की हरकतों से परीशान होकर मुझे कोने में रहने के सिद्धान्त पर विचार करना पड़ा तो इस पत्र की तरफ भी ध्यान गया। पत्र और कहानी को देख कर हर एक आदमी यही कह सकता था, कि स्वयं कहानी लेखिका की ही जबर्दस्ती शादी की जा रही है। इसका समर्थन इस कारण से और भी अधिक होता था, कि पत्र में अपना पता एक "और-किसी" के मार्फत लिखा था। मानों कहानी लिखना और पत्र व्यवहार घर वालों से छिपकर हो रहा है। और शायद उनके इन विचारों के फैलने की घर वालों को जानकारी नहीं है। जब मैंने यह अनुमान लगा लिया तो इन 'ब' साहिबा को एक पत्र लिखाः—

प्रिय·········!

आपका कृपा पत्र मिला। आपकी कहानी और आपका पत्र ध्यान से पढ़ने के बाद इस परिणाम पर पहुँचा हूँ, कि शायद स्वयं आप ही की शादी जबर्दस्ती की जा रही है। मैंने साफ-साफ कह कर जो गुस्ताखी की है, उसे माफ करें! साथ ही यह कहने की भी आज्ञा दें, कि अगर सचमुच ऐसा है तो उस तरकीब को काम में लाना किसी प्रकार भी उचित नहीं, जिसे दुहराने के लिए आपने अपनी कहानी में कहा है। अर्थात् घुल-घुल कर मर जाना। लाहौल बिला कूह! मुसलमानों की लड़कियाँ न हुईं, बताशा हो गईं, कि घुली जा रही हैं और फिर इस हरकत को तो महात्मा गाँधी भी पसन्द न करेंगे। जो सत्याग्रह और पारस्परिक सहायता के पक्षपाती हैं। क्योंकि यह काम किसी भी तरह 'सत्याग्रह' की परिभाषा में नहीं आ सकता। अगर लड़कियाँ "काजी" के सामने 'हाँ' की जगह पर 'ना' कह दें और उन्हें कोई पकड़ ले जाय तब अगर ऐसा किया जाय तो एक बात भी है। लेकिन स्वयं अपनी शादी में एक पार्टी के हैसियत से शोभा बढ़ाकर दाढ़ीदार गवाहों के सामने 'हाँ' कह दिया, और फिर मरना आरम्भ कर देना बेहद गलती है। रह गई जबर्दस्ती की बात; तो उसके लिए निवेदन है, कि हरएक खूबसूरत लड़की इस लायक है, कि उससे जबर्दस्ती शादी कर ली जाय। हर एक मर्द का, चाहे वह मेरी ही सूरत-शकल का क्यों न हो, यह पैदाइशी हक है, और दुनिया की कोई ताकत इस मुनासिब अधिकार को किसी मर्द से नहीं छीन सकती कि जवान लड़की को यह अधिकार प्राप्त नहीं, कि मर्दों के इस काम पर राय भी प्रगट करे। हाँ, अगर किसी बुढ़िया के साथ कोई नवजवान जबर्दस्ती शादी करना

चाहे तो बुढ़िया को अधिकार है, कि वह विरोध की आवाज़ ऊँची करे। जो मर्द अपने इस पैदायशी अधिकार से वंचित हो जाता है, वह खूब-सूरती की इज्जत करना नहीं जानता, और इस लायक नहीं, कि कोई भी शरमीली और नवजवान लड़की उससे शादी करे। इसलिए वे महाशय, जो आपसे जबर्दस्ती शादी करना चाहते हैं, तारीफ के लायक हैं। ईश्वर उनके साहस को बढ़ाये। आमीना, अगर आप इस तरह इस नियत से किये हुये रिश्ते से परीशान हैं तो अच्छा हो कि आप अपने माननीय पिता का पता मुझे बतलायें, जिससे कि मैं उन्हें साफ-साफ लिख दूँ, कि आपकी आँखों की रोशनी इस रिश्ते से बहुत ही परीशान हैं। नहीं तो दूसरी तरकीब यह है, कि आप स्वयं ठीक समय पर, जब गवाह आप से आप पूछें तो साफ इन्कार कर दीजियेगा, कि मैं उस आदमी से निकाह करना नहीं चाहती। लेकिन इन दो तरकीबों के अलावा एक और भी तरकीब है, लेकिन वह मैं अदना आला को बताना नहीं चाहता।

मुझे आशा है, कि आप मेरे साफ-साफ कहने पर, अगर मेरा अनुमान ठीक है, तो नाराज न होंगी। और मेरी बेवकूफी पर! अगर मेरा अनुमान गलत है, तालियाँ न बजायेंगी।······नमस्कार

आपका कृपाकांक्षी

"रशीदी"

C/o स्वर्गीय चिरंजी लाल

यह पत्र लिखकर मैंने डाक में डाल दिया, और यह सोचना शुरू किया, कि अगर किसी तरह यह लड़की अपने हाथ लगे तो शादी

गाँठी जाय। कोई पन्द्रह दिन तक तो पत्र का उत्तर ही न आया, लेकिन जब जवाब आया तो बहुत ही दुःख हुआ।

× × ×

परियों की कहानियाँ आपने भी पढ़ी होंगी! मुझे एक कहानी याद आगई। एक बादशाह का लड़का एक बादशाह की लड़की पर रीझ गया। बादशाह की लड़की किले में रहती थी जिसकी कुञ्जी एक देव के पास थी जो आदमी को शीघ्र ह खा जाता था। बादशाह के लड़के को एक बुढ़िया मिली और उसने देव से कुञ्जी लेने का उपाय बतलाया। बादशाह का लड़का किले के पास एक स्थान में छिप गया। दूसरे दिन सवेरे देव ने आदमी की गन्ध पाकर कहना शुरू किया, कि "मानुस गन्ध, मानुस गन्ध।" और बादशाह के लड़के को ढूँढ़ने लगा। बादशाह का लड़का उपाय जानता था, बाहर निकल आया। देव ने बादशाह के लड़के को देखकर खुशी से ताली बजाई, और कहने लगा—"ओ हो, खूब खूब, बीस बरस बाद एक भुनगा दिखाई पड़ा। अब दाढ़ गरम करूँगा!" बादशाह के लड़के ने यह सुनकर देव को सलाम किया, "मामा साहब सलाम।" इन देव साहब के भावों की तारीफ करनी पड़ती है। क्योंकि उन्होंने बादशाह के लड़के का सलाम सुन कर कहा, "खाऊँ खाऊँ, धूल खाऊँ, भांजे को कैसे खाऊँ?" और बादशाह के लड़के के साथ अपने सगे भांजे का-सा बरताव किया। आगे की कहानी से हमें सरोकार नहीं। यहाँ केवल यही निवेदन करना चाहता हूँ, कि उस पत्र से कुछ मानुस गंध आती थी। और खूब खूब बीस वर्ष बाद जो उनको भुनगा दिखाई पड़ा था, कि उन्होंने मुझे

भाई बना डाला। मैं क्या करता? लाचारी थी, भाई बनना पड़ा। पत्र नीचे लिखे हुये के अनुसार था:—

माननीय भाई साहब······नमस्ते।

आपका हमदर्दी से भरा हुआ पत्र मिला। आपका विचार ठीक नहीं है। मेरी शादी का सवाल ही नहीं है और न मुझे अपनी शादी से कोई विशेष दिलचस्पी है। हाँ, मेरी एक सहेली अलबत्ता है; जिनकी शादी उनकी मरजी के अनुसार नहीं हो रही है। माफ कीजिये, वह समय अभी नहीं आया, कि लड़कियाँ साफ-साफ काजी से इन्कार कर दें या बाप से लिखवा दें। रह गई वह तरकीब, जो आपने नहीं बताई, तो जब तक मालूम न हो उसके बारे में कोई राय कायम नहीं की जा सकती। मुझे जानने की इस प्रकार जरूरत भी नहीं है। मेरे कोई भाई नहीं है, इसलिये मैं आपको अपना भाई बनाना चाहती हूँ। मुझे आशा है, कि आप कभी-कभी अपनी अपरिचित बहन को याद करते रहेंगे। यह न मालूम हो सका, कि आपका नाम क्या है, और आप करते क्या हैं? क्या मैं पूछ सकती हूँ? अगर कोई हर्ज न हो तब ··।

आपकी बहन।

"ब"

इस पत्र को मैंने ध्यान से पढ़ा। हालांकि यह बहुत अच्छी तरह जानता हूँ, और शायद आप भी जानते होंगे कि मुँहबोले बहन और मुँहबोले भाई को छोड़ रिश्ते के भाई बहन का उस समय तक कोई विश्वास नहीं, जब तक, कि एक विशेष जाति दुनिया से मिटा न दी जाय। या ईश्वर, काजी भी एक विचित्र चीज है। मैंने स्वयं यह भयानक दृश्य अपनी इन्हीं दोनों आँखों से देखे हैं, कि अच्छे खासे

बहन भाइयों को इसी जाति के एक आदमी ने सौ रुपये के पीछे बर्बाद कर दिया। जरा सोचिए, हमारे दोनों चचाओं की सन्तान दोनों के यहाँ एक लड़का और एक लड़की। कल की बात है कि एक साहिबा का मुँह सूखता था कहते-कहते 'अनवर भाई, अनवर भाई' और अनवर भाई की बड़ी बहन थीं। वे चचा के बेटे को, जो तीन चार साल छोटा था, शायद अलगू कहती थीं और वह शिष्टाचार के साथ उन्हें आपा कहते थे। लेकिन पड़े जो ये चारों काजी के पल्ले तो जनाब एक साहिबा अब 'अनवर भाई' न कहकर 'उन' कहती हैं तो दूसरी साहिबा भलाई से भरे हुये अपने 'अलचू' को "वह" कहती हैं। लेकिन इन भयानक घटनाओं के होते हुये भी मैं सच निवेदन करता हूँ, कि मैंने इन 'ब' साहिबा को सचमुच अपनी बहन के बराबर बना लिया। या कम से कम जहाँ तक नियत का सवाल है। मैंने मन में सोच लिया, कि यह मुझे भाई बनाती है, तो मैं भी उनको बहन ही समझूँगा।

मैंने पत्र का जवाब बहुत ही संक्षेप में दिया—

बहन साहिबा—आदाब! आपका पत्र मिला। मुझे आपकी सहेली के साथ कोई हमदर्दी नहीं। वे उचित रास्ते पर है, या उनके होने वाले नियत पति! इसका फैसला मैं उस समय तक नहीं कर सकता, जब तक कि आपकी सहेली की तसवीर मेरे सामने न हो। रह गया काजियों से इन्कार का समय तो आप बुलाइयेगा, तो वह भी आजायगा। आपका यह सवाल, कि मै क्या करता हूँ? इस संबन्ध में निवेदन है, कि चलता हूँ, खाता हूँ, पढ़ता हूँ, बोलता हूँ, इत्यादि, इत्यादि, नाम मेरा बिलकुल "रशीदी" है। इसमें "प्रसाद" या "मल" वगैरह छोड़कर "हानन" 'अली' वगैरह जो जी में आये, जोड़ लें। ईश्वर जानता है,

काम चल जायगा। आपके नाम की इतनी जरूरत नहीं। पत्र और कथन से पता चलता है, कि आप मजेदार बेगम हैं। चलिये छुट्टी हुई। यह जान करके खुशी हुई, कि आपको शादी से कोई विशेष दिलचस्पी नहीं है। यह अभागी चीज भी ऐसी ही है। ईश्वर इस बुराई से बचाये ! बस......!

आपका भाई

"रशीदी"

इस पत्र के बाद दो पत्र और आये और तीसरा तो इस प्रकार नीरस और मनोरंजन रहित था, कि जवाब देने को भी मन नहीं चाहता था। लेकिन इसके बाद ही एक और पत्र आया। उसमें और कोई विशेष बात तो न थी, लेकिन यह लिखा था कि मैं आपको अपना भेदज्ञ बनाकर एक छिपा हुआ भेद बताना चाहती हूँ, लेकिन शर्त यह है, कि कसम खाइये, कि किसी से कहियेगा तो नहीं।" और इसके बाद इस बात पर जोर दिया गया था कि यह भेद मुझे केवल अपना हमदर्द और प्यारा भाई समझ कर बताया जा रहा है।

अब इस पत्र को पढ़ कर मैं चौंका। वह कौन सा भेद है, जिसे मैं यहाँ बैठे-बैठे जानूँगा। मैंने पत्र में ऐसी मोटी-मोटी कसमें खाई थी, कि अगर अब लिखा गया होता तो पहली अप्रैल की डाकखाना की रियायत कुछ काम न आती। अपने पत्र का मैं बड़ी आकुलता के साथ इन्तजार कर रहा था, कि इसी बीच में एक पत्र आया। खोलकर जो पढ़ा, तो एक दूसरा ही मामिला। जरा सोचिये ! वह भेद यह था, कि बहन साहिबा के पिता बहुत बड़े बदमाश हैं। उन्होंने एक नीच जाति की औरत से शादी कर ली है। और बहन साहबा तथा उनकी माता

की ओर से बिलकुल बेखबर रहते हैं; और बहुत तकलीफें देते हैं। मैंने इस पत्र को कई बार पढ़ा। दोनों पत्र मेरे सामने थे। पहले वाले पत्र की गंभीरता, और उसका ढङ्ग तथा उसकी इबारत-देखकर और यह पत्र देख कर मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि भेद तो कोई जरूर है। लेकिन वह भेद कुछ और है। यह कि बहन साहिबा ने जिस समय मुझे पहला पत्र मुझे लिखा था, उस समय उनका बिलकुल यह विचार रहा होगा, कि मुझे असली भेद से परिचित करा दें। लेकिन बाद में विचार बदल दिया। जितना भी मैंने इस मसले पर सोचा, उतना ही मुझे दृढ़ विश्वास होता गया। खैर, मुझे कोई अधिकार न था, कि इस सन्देह का बयान करूँ। मैंने इस भेद को भेद स्वीकार करके राय भी दी और हमदर्दी भी प्रगट की। इस संबंध में उनके और मेरे कई पत्र आये और गये। और आपसी दोस्ती तथा नेकनियती दिखाई गई।

इसके बाद कुछ ऐसा हो गया कि पत्रों से जहाँ तक अनुमान लगाया जा सकता है, सचमुच अपना भाई समझता। मुझे उनके पत्रों की जोह रहती और जरा सी भी परीशानी होती तो उनको लिखता और उनसे हमदर्दी चाहता। वे राय भी देतीं। मेरे उन्हें और उनके मुझे सारे हाल मालूम होते रहे। लेकिन अपना नाम और पता उन्होंने मुझे न बताया, और न मैं उनसे किसी तरह कम था, अतः मैं ही क्यों बताता? वैसे दोनों के पत्र व्यवहार से हम दोनों को एक दूसरे की खान्दानी बातों का पता लग जाना आसान था। मेरी समझ में इस प्रकार का पत्र व्यवहार दोनों ही आदमियों के लिये अकेले में मनोरंजन का साधन होता है। अपने पत्र-व्यवहार में हम दोनों विभिन्न मसलों

पर वादा-विवाद करते थे यह पत्र व्यवहार चल ही रहा था। कि एक विचित्र मामिला सामने आया।

[४]

मैं नहीं कह सकता ! लेकिन यह सच बात है, कि बैठे-बैठे कुछ मनोरंजन करने की सूझी, अतः नीचे लिखा हुआ विज्ञापन अखबार में छपवा दिया—

वर की जरूरत

एक नवजवान लड़की के लिये वर की जरूरत है। लड़की बहुत ही ऊँचे विचार की तथा पढ़ी लिखी है। हिन्दुस्तानी और अँगरेजी संगीत को भली भाँति जानती है। पढ़ने लिखने की ओर बेहद प्रेम रखती है। अपनी माँ की इकलौती लड़की है, और माँ की जायदाद दो सौ रुपये महीने आमदनी की है। इसके अलावा लड़की के नाम स्वयं ढाई लाख रुपये बैङ्क में जमा है। लड़की की माँ एक्ट्रेस थी। लेकिन अब वह अपना पेशा छोड़ चुकी है। उसने लड़की को सदा से अपने पेशे से अलग ही रक्खा है और लड़की स्वयं इससे······घृणा करती रही है। माँ यह चाहती है, कि लड़की की शादी किसी नेक और सभ्य, लेकिन अच्छे खान्दान के लड़के के साथ करदे; जो पढ़ने-लिखने का शौक रखता हो और लड़की के साथ विलायत जाकर स्वयं शिक्षा प्राप्त करे और लड़की को भी तालीम दिलाये। लड़का गरीब हो तो कोई हर्ज नहीं। नीचे लिखे हुये पते पर रजिस्ट्री के द्वारा पत्र व्यवहार करें—पत्र के साथ फोटो जरूर हो; नहीं तो कोई ध्यान न दिया जायगा।

मार्फत संपादक "शाहजहाँ"

देहली।

इस विज्ञापन को केवल दो-तीन ही बार छपाया था, कि रजिस्टरियों का अंबार लग गया। भगवान ही बचाये, मैं क्या निवेदन करूँ, कि कैसे कैसे पत्र आये हैं। मौलवियों से लेकर बदमाशों तक के पत्र थे। कोई सौ रुपये की नौकरी पर हैं तो इस्तीफे देने को तैयार, कोई तिजारत करते हैं तो उसे लात मारने को तैयार और फिर एक से एक ऊँचे खान्दान के आदमी मौजूद। ऐसे, कि यदि कहीं मैं लड़की होता तो एक बार मुझे उम्मीदवारों में से कई के साथ शादी कर लेनी पड़ती। फिर उन पत्रों के लिखने का ढङ्ग! या ईश्वर, मानों भीख माँग रहे हैं। बिना कहे सुने गुलामी का चिट्ठा लिखने को तैयार हैं। मानों केवल लड़की को ऊँचा खान्दान का होने के कारण इस तरह 'उतारू' हो रहे हैं। फिर तसवीरें तो फिर देखते ही रहिये। एक से एक "बगल बूश" और "पारिन्दें" मौजूद। ऐसा, कि बस देखते ही रह जाइये। इनमें से अगर खास-खास पत्रों की चर्चा की जाय तो एक बहुत बड़ा दीवान तैयार हो जाय। यह तो सब कुछ था; लेकिन मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही, जब एक लिफाफा खोलकर क्या देखता हूँ, कि जनाब इजाज अली खाँ साहब का फोटो सामने है पत्र के साथ। कौन इजाज अली खाँ? वही टूँडले पर, जिन्होंने मुझे व्यर्थ में परीशान किया था, इस समय मेरे सामने उनकी बेवकूफी से भरी हुई अर्जी या दरख्वास्त मौजूद थी। इस पत्र को पाकर मैं उछल पड़ा। वह मारा है अनाड़ी को। अब सवाल यह था, कि क्या कारण है, जो मैं इन साहब को टूँडले के ही स्टेशन पर न बुलाऊँ। यह काम बड़े सोच-विचार का था; और सच पूछिये तो बहुत बुरी तरह फँसा। इन पत्रों में से मैंने चुन कर थोड़े से अलग किये और उनसे एक उचित ढंग

पर एक गुम नाम कायदे से पत्र व्यवहार शुरू किया। यह सिलसिला जारी ही था, कि और भी मनोरञ्जक मामला सामने आया।

× × ×

[५]

बहन 'ब' साहिबा से पत्र व्यवहार जारी ही था; कि उन्होंने उस विषय पर बहस शुरू कर दी, कि एक लड़की किस प्रकार का पति पसन्द करती या कर सकती है। दुख की बात है, कि उन्होंने पतियों के जितने प्रकार बताये थे, मैं अपने को उनमें किसी में भी शामिल न कर सकता था। लेकिन यह बात सच थी, कि अगर बहन साहिबा सचमुच मुसलमान लड़कियों के विचारों का ठीक-ठीक प्रदर्शन कर रही थीं तो इससे यही अनुमान लगता था, कि अगर लोग चाहेंगे, कि अपनी लड़कियों के लिए ऐसा पति ढूँढ़ें जो उनकी मरजी के अनुसार हो तो वह दिन दूर नहीं, जब बहेलियों और अवारों के दिमाग बिगड़ जायँ, और "उल्लू" तथा "गधों" की नीयत का ठिकाना न रह जाय।

दूसरा मसला, जिस पर बहन साहिबा से बहस चल रहा था, यह था कि वे कहती थीं, कि नवजवान आमतौर पर बुरे ख्याल के, बुरी समझ के और बुरी चाल-चलन के होते हैं तथा बुरी नीयत भी रखते हैं। इस सम्बन्ध में वे मेरी इतनी तारीफ करती थीं, कि जोश में आ जाती थीं। कहती थीं, कि मुझे छोड़कर और सब नवजवान बदमाश हैं। इनके पत्र के रङ्ग-ढङ्ग से यह सन्देह होता था, कि शायद उन्हें इस बात का बहुत कड़ुआ अनुभव हुआ है। जब मैंने इसका जोरदार जवाब दिया तो बहन साहिबा ने मुझे लिखा, कि अगर मैं भेद न बताने की कसम खाऊँ और ईमानदारी से जो कुछ दस्तावेजी सबूत वे मुझे दें, मैं ज्यों

का त्यों लौटाल दूँ तो वे मुझे कायल कर देगी। प्रगट है, कि घटनाओं ने अजीब करवट ली। और मैंने हर कसम का उन्हें वचन दे दिया। आखिर एक मोटी-सी रजिस्ट्री मेरे नाम पहुँची। खोलकर देखता हूँ तो बहन साहिबा का पत्र था। और उसके साथ एक बेहूदा और बदमाश नवजवान के पत्रों का पुलिन्दा, जो बिलकुल बहन साहिबा के पीछे हाथ धोकर पड़ गया था। किसी तरह जान ही न छोड़ता था। अब ये कौन हजरत थे! या ईश्वर, जरा विचार तो कीजिये, घायल प्रेमी वही जनाब इजाज अली खाँ साहब थे। थोड़ी देर के लिए इस संयोग पर मैं खुशी के मारे पागल हो गया। समझ में न आया, कि क्या करूँ? और क्या न करूँ? मामिलों ने घटनाओं को एक मनोरंजक गुत्थी दिया था।

बहन साहिबा, मालूम होता है, कि एक दिलचस्प आदमी थीं। जो पत्र उन्होंने इजाज अली खाँ साहब को लिखे थे; उनकी नकलें हर एक पत्र के साथ थीं।

इस पत्र-व्यवहार को पढ़कर मालूम हुआ, कि बहन साहिबा ने पहले तो इजाज अली खाँ को उपदेश दिया था, लेकिन जब वे न माने तो लाचार होकर चुप्पी धारण कर लीं और वह भी ऐसी, कि इजाज अली खाँ के दस-बारह पत्र आये। लेकिन उन्होंने कोई जवाब न दिया। आखिर वे थक कर बैठ गये। मैंने इन सभी पत्रों को ध्यान से पढ़ा, और फिर उसका जवाब लिखा। मैंने पहले बहन साहिबा को मुबारकबाद दी, कि उन्हें एक ऐसा चाहने वाला मिला। इज़ाज अली खाँ साहब के पत्र व्यवहार को मैंने अपनी ओर से यह ठहराया कि हर नवजवान को एक लड़की पर रीझने का अधिकार प्राप्त है। लेकिन

शर्त यह है कि रीझने वाला जब उचित रास्ते पर चले अर्थात् जब शादी करने की नीयत हो। कसूरवार मैंने स्वयं बहन साहिबा को और सारी लड़कियों को ठहराया। केवल इस कारण से कि नवजवान बेचारे प्रकृति की तरफ से लाचार हैं, जो कि एक शक्ति है जो उन्हें अपनी ओर खींचती है। इजाज अली खाँ भी एक नवजवान हैं, और उन्हें प्रकृति आपकी ओर खींचती है। अब रह गया यह सवाल, कि इस खिंचाव के बश में होकर उन्होंने क्या किया? आपको पत्र लिखा बहुत अच्छा किया। लेकिन कोई पत्र उन्होंने आपको ऐसा नहीं लिखा, जिसमें वे यह पूछते कि आपका प्रतिष्ठित खान्दान क्या है? जिससे मैं आपको प्राप्त करने का प्रयत्न करूँ और न यह लिखा कि मैं तुमसे शादी करना चाहता हूँ। और अगर इसे मंजूर करो तो सफलता का रास्ता दिखाओ तथा मेरी मदद करो। केवल एक यह बात थी जिससे पता चलता था कि इजाज अली साहब की नीयत ठीक नहीं है। अन्त में मैंने बहन साहिबा को यह भी लिखा, कि इजाज अली आपको चाहने वाले हैं। आपके लेख उन्होंने देखे, और आपकी लेखन शैली की खूबियों का उनके दिल पर असर पड़ा। आपको उनकी इज्जत करनी चाहिये और उनको बदमाश या बुरे विचार वाला बिलकुल न समझना चाहिये।

मेरा पत्र बहन साहिबा को जो मिला तो उन पर विशेष असर हुआ। मैंने उनके पत्र ज्यों के त्यों लौटाल दिये थे! उन्होंने मेरे जवाब को ध्यान से पढ़ा और इजाज अलीखाँ का जो मैंने पत्र लिया था उस पर उन्हें आश्चर्य हुआ। अतः उनका पत्र आया, और उसके साथ इजाज अलीखाँ का आखिरी पत्र भी आया, जिसे उन्होंने सोच

समझकर रोक लिया था। क्योंकि उसमें प्रेम को प्रगट करने में बहुत ही खुलकर बातें की गई थीं। इस पत्र में जो कुछ भी लिखा था उसकी नकल यहाँ देने से कोई लाभ नहीं। एक खास बात को बताना चाहती हूँ। वह यह कि उसमें इजाज अली साहब ने दो खास निवेदन किये थे। एक तो बहन साहिबा की तसवीर माँगी थी और दूसरे पैर का नाप माँगा था इसलिये कि उनके शहर में औरतों के जूते बहुत अच्छे बनते थे और वे चाहते थे कि अपनी प्रियतमा को भेंट करें। बहन साहिबा ने इस पत्र को यह कह कर भेजा था, कि उनके दिल ने उन्हें फटकारा, कि आपने "हमदर्द भाई" (खाकसार) से कोई बात छिपाये रक्खी। फिर यह भी राय ली थी, कि क्या तसवीर भेज देनी चाहिये। साथ ही तसवीर भेजने में जो आपत्तियाँ थीं, उन्हें भी प्रगट कर दिया था।

यह पत्र जब मुझे मिला है, तब पहले तो मेरी तबीयत खराब थी, और दूसरे इन मामिलों की उलझनों में बेतरह पड़ा था, कि मुझे क्या करना चाहिये ? मैं कह नहीं सकता, कि इन मनोरञ्जक बहन से मुझे किस तरह प्रेम हो गया था। दुनिया में मेरा कोई साथी और हमदर्द था तो यही गुमनाम बहन। जब मैं सोचता था, कि कैसी भोली भाली और सच्ची लड़की है, मुझसे किस सादगी के साथ पेश आ रही है, मेरी किस तरह हमदर्द है, और कितनी मनोरंजक है तो मेरे दिल में अकथनीय प्रेम की लहर पैदा हो जाती। क्या उससे अधिक मनोरंजक और उससे अच्छा दोस्त मुझे मिल सकता है ? असम्भव ! उसकी जिन्दादिली ने मेरे विचारों को चमका दिया है। उसकी सुन्दर लेखन-शैली पर और उसकी तबीयत की तेजी से मेरा दिल घंटों खुश रहता।

ईश्वर को लाख लाख धन्यवाद है, कि उसने मुझे ऐसा मेहरबान और हमदर्द दोस्त दिया है; जो मुझे कभी मुअस्सर नहीं हुआ। मतलब यह कि कुछ कारणों से पत्र का जवाब जल्द न दे सका। और इस बीच में बहन साहिबा का एक छोटा सा पत्र आया जिसमें जवाब न मिलने पर चिन्ता प्रकट की गई थी। पत्र से आवश्यकता से कुछ अधिक जल्दबाजी प्रकट होती थी। इस पत्र को पाते ही मैंने बहन साहिबा को एक पत्र लिखा, और सभी बातों के अलावा मैंने उन्हें लिखा, कि देखो तुम मेरी हमदर्द बहन और मैं तुम्हारा हमदर्द भाई हूँ। अब अगर भाई के लिये तुमने इतना भी न किया, कि एक अच्छा-सा जूता बनवा दिया तो कुछ न किया। अतः तुमको चाहिये, कि मेरे पैर का नाप लेकर इजाज अली को भेजकर एक अच्छा सा जूता बनवा दो। रह गई तुम्हारी तसवीर, तो उसका इन्तजाम मैं कर लूँगा। बाजार से एक ऐसी अच्छी सी तसवीर लेकर इजाज अली साहब को भेजूँगा, कि उनकी तबीयत भी खुश हो जायगी! प्रकट है, कि इस राय से सबको फ़ायदा होगा! और तुम्हारा कुछ नुक़सान न होगा। मुझे जूता मिल जायगा, इज़ाज अली को तसवीर मिल जायागी, मैं भी तुम्हारा एहसान मन्द हूँगा, और इजाज अली पर भी तुम्हारा एहसान होगा। अतः मुझे जूता पहनाने पर तैयार हो तो अपने पैर का नाप भेजूँ। यह पत्र लिखकर मैंने डाल दिया। अभी पत्र वहाँ पहुँचा भी न होगा, कि एक हद से ज्यादा मनोरंजक और अजीब मामिला सामने आ पहुँचा। लेकिन पूर्व इसके कि उसकी चर्चा करूँ कुछ उन पत्रों की चर्चा भी सुन लीजिये, जो एक्ट्रेस वाली लड़की के विज्ञापन से प्राप्त हुये थे।

[६]

मैंने अपने दोस्तों को इस मनोरंजक पत्र व्यवहार में और शामिल कर लिया। अब मेरी सलाह कुछ और ही थी। मैंने दो उम्मीदवारों को अभ्यास की पट्टी बनाने के लिये चुना। एक तो इजाज अली साहब थे और दूसरे एक और साहब थे; जिनका नाम मान लीजिये कि अहमद था! इन दोनों हजरतों की तसवीरें मेरे पास थीं हीं! और मैंने अपना नाम अब तक नहीं बताया था। अब मैंने सोचा, कि इन हजरतों की ऐसी मुलाकात कराई जाय, कि जिससे दोनों यही समझें कि मुझसे मिल रहे हैं। अतः मैंने इन दोनों साहबों का समय एक्ट्रेस की लड़की के लिये चुनकर दोनों को पत्र लिख दिये।

× × ×

सेवा में भाई इजाज अली खाँ साहब!

अल्सलाम वालेकुम।

मेरे लिये सबसे अधिक प्रसन्नता की बात है कि मैंने और बहन-साहब अर्थात् एक्ट्रेस (लड़की की माँ) ने स्वयं लड़की की मरजी के मुताबिक अलग चुनाव कर लिया है। ईश्वर इस इरादे में हमें कामयाब करे। अब तक मैं गुमनाम रहा। आज अपना न केवल नाम प्रकट कर रहा हूँ, बल्कि अपनी तसवीर भी आपको भेजता हूँ। मुझे आशा है, कि आप एक हमदर्द और मुहब्बत करने वाले रिश्तेदार साबित होंगे। मैं अभी तक अपने सम्बन्धी के यहाँ था। अब घर जा रहा हूँ। वहाँ पहुँचकर पूरे पते के साथ सूचना दूँगा और आपको एक दिन के लिये वहाँ मुझसे मिलने आना पड़ेगा। वहाँ आपके ठहरने का मुनासिब इन्तजाम डाक बँगले में कर दिया जायगा। क्योंकि आप

जानते हैं, कि लड़की की खाला वगैरह अब भी इसी पेशे में हैं, और आपका ऐसी जगह ठहरना मुनासिब नहीं।

यह तसवीर मेरे और आपके सम्बन्ध की यादगार रहेगी !

आपका दर्शनाभिलाषी

अहमद अली

यह पत्र लिखकर अहमद अली साहब की तसवीर उसके साथ भेज दी, जिससे, कि अगर वे अहमद अली साहब से मिलें, तो मेरा धोखा हो।

दूसरा पत्र इसी तरह का अहमद अली साहब को लिखा। और उसके साथ इजाज अली खाँ साहब की तसवीर भेज कर अपना नाम इजाज अली खाँ बना दिया और लिख दिया, कि मैं स्वयं आपसे मिलने के लिये आपके यहां हाजिर हूँगा; लेकिन ठहरूँगा डाक बँगले में। आने से पहले तार द्वारा सूचित करूँगा, जिससे मेरे ठहरने का प्रबन्ध आप डाक बँगले में कर सकें। और बहुत सी लच्छेदार बातें लिख दीं। अब केवल इतना ही रह गया, कि एक पत्र इजाज अली साहब को लिख दिया जाय, कि फलाँ दिन पहुँचे और एक तार अहमद अली साहब को दे दिया जाय कि फलाँ दिन पहुँचता हूँ ! फिर दोनों साहब भिड़ जायँ आपस में। इस रोकनेवाले वाक्य को छोड़ कर अब मैं असली कहानी आरम्भ करता हूँ, अर्थात् बहन 'ब' वाला अनोखा और अजब मामिला।

× × ×

[७]

वह विचित्र मामिला यह था, कि 'ब' साहिबा का एक छोटा-सा

पत्र आया। खोलकर पढ़ा तो हैरान हो गया। पहले तो अपने भेद को मुझ जैसे हमदर्द भाई से इतने दिनों तक छिपाये रखने की मुझसे माँफी माँगी और फिर अपने गुप्त भेद को प्रगट किया। बात यह थी, कि उनकी शादी जबर्दस्ती किसी "मनहूस" के साथ की जा रही थी! बात पक्की हो जाने के कारण बहन साहिबा के होश-हवास गायब हो रहे थे, और वे तड़फड़ा रही थीं। मुझसे मदद चाहती थीं। उन साहब की सभी बुराइयाँ गिनवाई थीं, जिनके साथ शादी हो रही थी। बहुत ही बेहोशी की हालत में मुझे लिखा था, कि 'मेरे प्यारे अनदेखे भाई, भगवान के लिये मुझे मौत के इस चंगुल से निकालो।" मतलब कि पूरा पत्र का पत्र खुशामद, कसमों और 'खुदा के वास्तों' से भरा पड़ा था। प्रगट है, कि मुझे अधिक दुख हुआ। लेकिन क्या करता? बहुत कुछ सोचा; लेकिन व्यर्थ। मैं भला क्या सलाह दे सकता था? अलावा इसके, कि मैंने यह लिख दिया, कि साफ साफ या तो मां से कह दो और या फिर ठीक समय पर इन्कार कर जाता। इसके अलावा कोई चारा ही नहीं। यह, कि ऐसा करने की राय देकर उनकी हिम्मत बँधाई और इस तरह से उन्हें तैयार किया, कि वे इस काम को कर डालें। अतः अब इसी मसले पर जोरदार पत्र व्यवहार शुरू हो गया। मेरी सलाह के जवाब में उन्होंने शर्म और दया की चर्चा की। शर्म के कारण न तो यह सम्भव था, कि अपनी माँ से कहें और न यह संभव था, कि ठीक समय पर जब बारात आये, तब इन्कार कर दें! ऐसा करने में उन्हें इतनी लज्जा आती थी, कि मर जाना मंजूर था। मुझे शुरू से ही लड़कियों के इस कमजोर बहाने से नफरत है और मैंने जरा तरस खाते हुये लिख दिया, कि बहन साहबा दो सूरतें आपके

सामने हैं। एक तो यह बेहयाई, कि माँ से इन्कार कर देना, और दूसरी यह सूरत, कि इस बेहयाई से बचने के लिये मंजूर कर लेना और अपने आपको तथा अपनी उमङ्गों को एक ऐसे आदमी के हवाले कर देना, जिससे तुम्हें बहुत ज्यादा नफरत है। दुख की बात है, कि केवल रस्मी शर्म के कारण आप उस गोद में जाने को तैयार हैं, जो अपने लिये नर्क की गहराई है। इस बेशर्मी से मौत अच्छी, या तैयार हो जाओ तो झगड़ा मिट जाय! मेरी समझ में जो लड़की ऐसी करती है, वह अपनी इज्जत पर बट्टा लगाती है। अगर वह मुसलमान है और उसके दिल में कुछ भी ईमान है तो वह अपने खान्दान के साथ ऐसी बेइमानी न करेगी। माँ को अधिकार है, कि अगर लड़की पर ऐसा समय आये तो वह बाप से कह दे। आगे आप जैसा चाहें, वैसा करें, आपको अख्तियार है।

इस ठीक दलील से प्रमाणित बहस का जवाब बहन साहबा से कुछ बन न पड़ा। मान गईं। लेकिन 'अगर और मगर' करने लगीं। खान्दानी झगड़े और रस्म रवाज की बात करने लगीं! मैंने भी जलकर लिख दिया, कि बहन अगर यही मामिला है, तो मुझे इस सम्बन्ध में न लिखो। तुम जानों, और तुम्हारा काम। एक, दो तीन ही पत्रों में यह मामिला ठंडा पड़ गया; लेकिन इसकी चर्चा होती अवश्य थी। कारण यह था, कि खतरा बहुत दूर था। और उन्हें सोचने के लिये अधिक समय था।

× × ×

जब इस मामले की गर्मी कुछ कम हुई, तो मैंने इजाज अली वाले मामिले को उठाया। अर्थात् तकाजा किया कि मुझे जूता

बनवा दो। इस विचार पर वह बहुत प्रसन्न हुई। लेकिन सवाल यह था, कि इजाज अली साहब के हर एक पत्रों को हजम करके बैठ गई थीं। इसलिये सवाल यह था, कि अब फिर बातचीत कैसे शुरू की जाय! मैंने सलाह दी, कि तुम अपनी तरह से एक 'मजेदार' पत्र उन्हें लिख दो। बस इतना ही काफी है। इस सम्बन्ध में बहन साहबा ने बहाना यह किया, कि उन्हें प्रेम-पत्र लिखने नहीं आते। मैंने इसका जवाब यह दिया, कि तुम बहुत ज्यादा मक्कार हो। हर नवजवान लड़की केवल 'अल्ला मियाँ' और 'भालू' को छोड़कर बाकी हर तरह के आदमी से प्रेम कर सकती है और इस सम्बन्ध में पत्र लिख सकती है। वह दूसरी बात है, कि तुम न लिखना पसन्द करो तो अच्छा है मैं लिख दूँगा और तुम उसकी नकल करके भेज देना। इसका जवाब बहन साहिबा ने यह दिया, कि मुझे बदनामी से डर लगता है। कहीं ऐसा न हो, कि इजाज अली साहब के पास पकड़ में आजाने के लायक कोई लिखावट आजाय और वे उससे अनुचित लाभ उठायें। खास कर ऐसे समय में, जब कि मेरी शादी हो रही है। मैंने इसका यह जवाब दिया, कि तुम अव्वल नम्बर की बेवकूफ हो। अच्छा है कि तुम बदनाम हो जाओ! और तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध जो शादी हो रही है, वह गड़बड़ हो जाय। इसके बाद मैं जिम्मा लेता हूँ, कि एक मोटा सा हुक्म मानने वाला बहनोई ढूँढ लाऊँगा और तुम्हारे साथ उसकी शादी कर दूँगा। इस जवाब पर वह बहुत हँसी और जवाब भी उन्होंने बहुत सी शोखी और शरारत से दिया। लेकिन राजी न हुई। बहाना यह था, कि उन्होंने कभी ऐसा नहीं किया, और उन्हें डर लगता है।

मैंने जब देखा, कि सचमुच अपनी राय में यह ठीक कह रही है और कुमारी लड़की के लिये ऐसी हिम्मत करना कठिन है, तो मैंने एक और चाल चली। यह जानता ही था, कि बड़ी जिन्दादिल लड़की है। लड़की होने के कारण लाचार है, नहीं तो न मालूम कितनी शरारत करती। इसलिये मैंने इस आनन्द और मनोरंजन का हवाला दिया, जो इस प्रकार की बातों से जरूर ही पैदा होता है। अपनी पहली शादी की कोशिश में मेरे ऊपर जो कुछ बीती थी, वह किसी दूसरे पर घटा कर स्वयं जो कुछ सामने आया था, उसे अपनी शरारत बताया और वर्तमान एक्ट्रेस की लड़की के विज्ञापन की चर्चा मैंने कीं; कि यह सब मैंने केवल मनोरंजन के लिये कर रक्खा है और यह भी लिख दिया, कि दर्जनों तसवीरें और अर्जियाँ आई हुई हैं और उन सभी उम्मीदवारों को मैं उल्लू बना रहा हूँ। अगर तुम इस मनोरंजन में मेरा साथ देना चाहती हो तो बिसमिल्लाह! बदनामी के डर को झोंको चूल्हे में। आवो, और हमारे साथ इन अजीब मनोरंजनों में शामिल हो जाओ। हमें जूता पहनाओ; स्वयं हँसो, और सबको हँसाओ, कि यही जिन्दगी है। शादी तो कोई न कोई बेवकूफ तुमसे कर ही लेगा, लेकिन खुदा जाने इस प्रकार का मनोरंजन फिर नसीब हो या न हो! खास तौर पर जब कि तुम अब भी गुमनाम हो; इसलिये कोई डर नहीं है।

मेरे इस लम्बे चौड़े पत्र को उस दिल्लगीबाज और शोख लड़की ने पढ़ा और इन शरारतों के विचार ने ही उसे राजी कर दिया। लेकिन उसने यह लिखा कि मुझे पहले उन बातों में शरीक करो और वे मनोरंजक पत्र और तसवीरें मेरे पास देखने के लिये भेजो।

अतः मैंने इजाज अली साहब और अहमद अली साहब के पत्रों को छोड़ कर शेष सभी पत्र और तसवीरें रजिस्ट्री से बहन साहबा के पास भेज दीं। अब शपथ है मुझे अपने 'झूठ मक्कारी' और दगाबाजी' की, कि वे पत्र जब हमारी शोख और मसखरे बाज बहन के पास पहुँचे हैं तो मनोरंजन का एक भूचाल सा आगया। असल बात यह थी, कि इन दर्जनों पत्रों में एक पत्र उन साहब का भी था जिनका सम्बन्ध हमारी प्यारी और मनोरंजक बहन से तै पाकर मामिला पक्का हो गया था और जिनसे शादी करने की अपेक्षा बहन साहबा मर जाना अच्छा समझती थीं। काश, मैं न हुआ। जो स्वयं अपनी आँखों से देखता, कि बहन साहबा का अपने भावी पति की दरख्वास्त तसवीर के साथ देखकर क्या हाल हुआ होगा।

परिणाम यह निकला, कि उन्होंने अपने भावी पति का असली पत्र ज्यों का त्यों एक जबर्दस्त पत्र के साथ मुझे भेज दिया, और यह हिदायत की, कि मैं वह पत्र और तसबीर फलाँ-फलाँ साहब के पास भेज दूँ। और एक गुमनाम पत्र भी लिख दूँ, कि आप ऐसे बे ममता आदमी के साथ अपनी लड़की की शादी कर रहे हैं जो रंडियों के पैसे के लिये ऐसी बेशर्मी का पत्र लिख सकता है। ये साहब बहन साहबा के कौन थे? मैं नहीं कह सकता। बहन साहबा ने केवल इतना ही लिखा था, कि मेरे सम्बन्धी हैं और इस होने वाले सम्बन्ध के बड़े विरोधी हैं। लेकिन दूसरे रिश्तेदारों के आगे उनकी एक न चली। मैंने सबसे पहला काम यह किया, कि बहन साहबा के हुक्म की तामील की और एक बनावटी नाम से पत्र लिख कर इन साहब का पत्र और तसबीर रजिस्ट्री से भेज दी! यह पत्र सचमुच ऐसी बेहयाई के साथ

लिखा गया था, कि जैसे कोई भीख माँग रहा हो। अपने घराने की मुफलिसी और तंगी का हाल; धन सम्बन्धी परीशानियों का हाल, इत्यादि इत्यादि लिख कर इस ढङ्ग से दरख्वास्त की थी कि जैसे कोई गिड़गिड़ाकर भीख माँग रहा हो। यह पत्र तो मैंने लिखकर डाल भी दिया, लेकिन बहन साहबा को पत्र लिखा, कि तुम्हारी जान इस जुल्मी से छुड़ाये देते तो हैं, लेकिन शर्त यह है, कि अब तुम मुझे जूता मँगवा दो।

अब प्रगट है कि यह पत्र उन प्रिय सम्बन्धी के पास पहुँचा होगा, तो उन्होंने क्या न सितम ढाया होगा! बहन साहबा के पत्र की प्रतीक्षा थी, लेकिन पत्र कुछ देर में आया। मालूम हुआ, कि इन रिश्तेदार ने पत्र पहुँचते ही गजब ढा दिया, तूफान मचा दिया और प्रलय ला दिया। सारे खान्दान के आदमी इकट्ठे हो गये। लिखनेवाला इन्कार नहीं कर सकता था। पत्र पहचानने वाले लोग मौजूद थे। तसवीर मौजूद थी। परिणाम यह कि खूब झगड़े उठे और शादी हमेशा के लिये गड़बड़ हो गई। या ईश्वर, कैसा निशाने पर तीर बैठा है।

अब हमारी शोख बहन की शरारत और खुशी देखने योग्य थी। मानों उसे फिर से नया जीवन मिल गया हो। मुझसे अधिक गहरा और कौन दोस्त हो सकता था? पत्र में फूल विखेरे हुये थे और स्वयं तकाजा किया कि अपना नाम भेजो, मैं जूता मँगवा दूँ। चाहे बदनामी हो, चाहे कुछ हो।

मैंने जवाब में यह लिखा कि भगवान् करे तुम जीती रहो। मत घबड़ाना। बदनामी से बिलकुल मत डरना। इसका हम जिम्मा लेते हैं

कि एक बहुत ही बड़ा बेवकूफ और अक्ल का मोटा अहमक बहनोई ला देंगे, जो दिन रात जूतियाँ खायेगा और उफ न करेगा।

मतलब यह कि मैंने एक उचित गरम प्रेम पत्र लिखकर बहन साहिबा को भेज दिया और उन्होंने ईश्वर का नाम लेकर पत्र के कागज पर उसे नकल करने के लिये इजाज साहबा के पास भेज दिया। अब इजाज साहब का बड़प्पन और उनकी नेक नियती देखिये, कि उधर वे एक्ट्रेस से शादी करने के लिये तैयार हैं और उधर से जब पत्र पहुँचा, तब फट पड़े बिलकुल हवा और पानी की तरह। ऐसा पत्र लिखा कि 'ब' साहिबा घबड़ा गईं। होश उड़ गये। मुझे इजाज साहब का पत्र भेजा और लिखा कि भगवान् के लिये उसे किसी तरह रोको। मैंने इस पत्र का जवाब तैयार किया। दूसरी बेवकूफियों के अलावे जूते की फरमाइश नये ढङ्ग से की। अपने पैर का नाप देकर लिखा, कि कृपा करके नाप किसी जूते वाले को देकर उसको हिदायत कर दीजिये, कि वी॰ पी॰ के द्वारा भेज दें। एक तसवीर बाजार से ले आया, और लिखा कि तसवीर सेवा में उपस्थित है। पत्र का मसविदा, पैर का नाप, और तसवीर बहन साहिबा को भेज दी और उन्होंने पत्र की नकल करके पैर का नाप तथा तसवीर इजाज साहब को भेज दी। परिणाम यह कि थोड़े ही दिनों में मेरी मनोरंजन और मसखरी बहन का हद से ज्यादा हँसाने वाला पत्र आया और उसके साथ एक पारसल जिसमें एक अदद ऐसा सुन्दर जूता था, कि मैं कह नहीं सकता। जूता हिदायत के अनुसार वी॰ पी॰ से नहीं भेजा गया था, बल्कि बिना दाम का मुफ़्त रहा। मजा यह कि जूते में भीतर की तरफ सुनहले अक्षरों में लिखा था, कि "इजाज" मानों पहनने वाले

का पैर इजाज साहब का पैर है। मैंने नम्रता की तारीफ करके जूता पहना जो बिलकुल ठीक आया। हालां कि मेरा पैर बड़ा नहीं है, लेकिन फिर भी छः नम्बर का पैर काफी बड़ा होता है। लेकिन तोबा कीजिये, इन कामों की तरफ भला कहीं प्रेमियों का ध्यान जाता है ? यह कम्बख्त महकमा ही ऐसा नालायक है, नहीं तो जो तसवीर उनके पास पहुँची थी अगर जरा भी उसे ध्यान से देखते तो उन्हें मालूम हो जाता, कि स्वयं तसवीर वाली ही ६ नंबर के साइज की नहीं ! कहाँ उसका पैर और कहाँ यह जूता।

इसके बाद कहने लायक बात यह है, कि बहन साहिबा ने इस माँग पर जोर दिया, कि इजाज अली साहब की भेंट करा दी जाय। शैतान को उँगुली दिखाना काफी था। मैं स्वयं इस आवश्यक मसले पर विचार कर रहा था। इस तरह अब इजाजअली और अहमद अली की मुलाकात का हाल सुनिये। किस्से को इस तरह संक्षेप करता हूँ, कि दोनों साहब एक दूसरे के असली नामों से परिचित थे। एक की दूसरे के पास असली तसवीर थी। यह दूसरी बात है, कि प्रत्येक दो साहबों में से हरएक को फर्जी एक्ट्रेस की दामादी का उम्मीदवार और दूसरे को एक्ट्रेस का भाई अर्थात् लड़की का मामा समझता था। एक पत्र अहमद अली के नाम से इजाज अली साहब को कि फलाँ दिन आइये और इजाज अली साहब की तरफ से अहमद अली साहब को एक तार, कि फलाँ वक्त पहुँच रहा हूँ। इसके लिये काफी प्रबन्ध था, कि दोनों की मुलाकात डाक बँगले में हो जाय। मैं एक ट्रेन पहले ही अपने एक दोस्त के साथ पहुँच गया। डाक बँगले के एक कमरे में मेज पर चाय का सामान लदालद रक्खा था और अहमद

अली साहब अपने प्यारे इजाज अली साहब को अभी-अभी स्टेशन से जाकर लाये थे। यह खाकसार अपने दोस्त के साथ बराबर वाले कमरे से झाँक रहा था। बीच के कमरे का दरवाजा इस चालाकी के साथ कुछ खुला रक्खा था, कि सब दिखाई दे सके, कि क्या हो रहा है।

दोनों एक दूसरे से अधिक गंभीर ठोस मिजाज और शरमीले थे। पहले दो एक फजूल बातें हुईं। लेकिन चूँकि हर दो साहब एक दूसरे को एक्ट्रेस का भाई और लड़की का मामा समझते थे, अतः बहुत जल्द सिनेमा की बातों पर आ गये।

अहमद अली साहब बोले—शायद सिनेमा से तो जनाब को भी दिलचस्पी होगी।

"बेहद !'—इजाज अली साहब चाय का घूँट लेकर बोले—कह नहीं सकता · · · ·।"

अहमद अली साहब कुछ नशे में आकर बोले—"यही मेरा हाल है। माफ कीजियेगा, जनाब ने स्वयं कभी ऐक्टिङ्ग में या किसी फिल्म में दिलचस्पी नहीं ली ?

इजाज अली साहब बोले—क्या निवेदन करूँ ? कह नहीं सकता, मुझे इसका कितना शौक है, लेकिन तमन्ना पूरी न हुई। जनाब को शायद मौका मिला होगा या कम से कम शौक तो होगा ही !

. अहमद अली साहब मुसकुरा कर बोले—कौन आदमी ऐसा है, जिसे ऐक्ट्रेस बनने का शौक नहीं; लेकिन जनाब हर किसी के भाग्य में यह कहाँ ?

इजाज अली साहब लड़की की मौसी की अहमद अली साहब की

बहन समझ ही रहे थे, और यह भी जानते थे, कि वह भी अपनी बहन अर्थात् लड़की की माँ की तरह एक्ट्रेस का पेशा छोड़ रही हैं; अतः उनके बारे में बोले—

"जनाब बहन साहबा ने पक्का इरादा कर लिया है; कि अब रिटायर हो जायँगी।"

इजाज अली साहब को चूँकि मैं यह लिख चुका था, अतः उन्होंने इस समय यह सवाल किया; लेकिन अहमद अली साहब सवाल को सूचना समझ कर बोले—मेरी समझ में तो अभी न रिटायर होना चाहिये।

इजाज अली साहब को मैंने लिखा था, कि फिल्म कम्पनियाँ खुशामद कर रही हैं। अतः वह बोले—खासकर जब कि कम्पनियाँ खुशामद कर रही हैं।

अहमद अली साहब इस सूचना पर जोर देकर बोले—ऐसी हालत में तो किसी तरह भी उचित......। चाय उँडेलकर पीने लगे और रुक गये। फिर बात को नये सिरे से उठाकर बोले—जनाब की कोई छोटी बहन भी हैं।

मानों यह तो निश्चित बात है, कि लड़की की माँ और मौसी उनकी बड़ी बहन हैं। दुर्भाग्य से इजाज साहब ने "भी" शब्द को सुना नहीं, या समझे नहीं और बिना सोचे-समझे जवाब दिया—जी हाँ!

अच्छा!—अहमद अली साहब ने चाय की प्याली को चमचे से हिलाते हुये कहा—शायद......सिनेमा से उन्हें भी प्रेम होगा।

इजाज अली साहब कुछ बेचैन से हो गये, लेकिन उनके पास

इस बात के अलावा और जवाब ही क्या था, कि आँखें झुकाकर कुछ झेंपकर कह दें—'जी हाँ।' (अर्थात् देखती हैं और अहमद अली साहब को पैदाइशी हक था कि वे इस 'जी हां' का यह मतलब लगा लें कि स्वयं वे भी एक्ट्रेस हैं) इस तरह वे इसी धोखे में पड़कर बोले—माशा अल्लाह! उन्हें किस फिल्म में पार्ट करने का अवसर मिला?

इजाज अली साहब का चेहरा बिलकुल लाल-पीला हो गया। चेहरा देखने के लायक था। कुछ खीझ के साथ उनके मुख से निकला—जी······।"

अहमद अली साहब बोले—···शायद बहन साहिबा के साथ किसी फिल्म में तो भाग ले चुकी होंगी।

"कौन बहन साहिबा?"—इजाज साहब घबड़ाकर बोले।

"अर्थात्······मेरा मतलब······।" अहमद अली साहब ने शर्माकर कहा—"जनाब मौसी साहबा!"

"कौन मौसी साहबा!"—इजाज अली ने परीशान होकर कहा—

"माफ कीजियेगा!"—लजाकर, अहमद अली साहब नीची नजर करके बोले—मेरा मतलब······शा·····साहब जादी की मौसी साहबा या शरीफ मां से है।

अब इजाजअली साहब कुछ चौकन्ने हुये। चाय की प्याली वगैरह से ध्यान खींचकर उन्होंने अहमद अली साहब की तरफ देखा जो शरमा रहे थे। और देखकर बोले—माफ कीजियेगा······शायद मैंने कुछ समझा नहीं।"

जवाब में अहमद अली साहब ने इजाज अली साहब को देखा, जिनके चेहरे से कुछ-कुछ नफरत प्रगट होनी शुरू हो गई थी। अहमद

अली साहब ने कहा—"माफ कीजियेगा, मेरा मतलब जनाब की बड़ी बहन साहबा से है।"

"लेकिन मेरी कोई बड़ी बहन ही नहीं।"—इजाज साहब तड़प कर बोले।

अहमद अली साहब मानों मामिले को बिलकुल समझ गये। "ओ हो, माफ कीजियेगा, तो जनाब की रिश्ते की बहन हैं। मैं असल में······।"

"भाई साहब······!"—इजाज साहब मामिले के तह तक पहुँचकर बोले—"माफ कीजियेगा मेरी कोई बड़ी बहन नहीं······मालूम होता है, कि गलत फहमी हुई है··· क्या मैं जनाब का नाम पूछ सकता हूँ।"

जाहिर है, कि अहमद अली साहब ने इसे मजाक समझा। विचार की बात है कि आवाज और मजाक! चोंच फटी की फटी रह गई। बोले—"गलत फहमी!"

"जी!"—इजाज अली साहब बोले—"जी हाँ! बिलकुल गलतफहमी हुई है। आपका नाम तभी तो पूछ रहा हूँ।"

अहमद अली साहब भी किसी से कम न थे। वे बोले—"आखिर जनाब को मेरे सम्बन्ध में सन्देह क्योंकर हुआ?"

इजाज अली साहब बोले—मेरे पास इसके कारण हैं। आप मुझे लड़की का मामू समझ रहे हैं, और अपने को उम्मीदवार समझ रहे हैं, और इधर मैं आपको लड़की का मामूँ और अपने आपको उम्मीदवार समझ रहा हूँ।

अहमद अली साहब बिगड़ कर बोले—माफ कीजियेगा, इस तरह

के मजाक का मुझे अभ्यास नहीं !……जनाब मुझे बेवकूफ बनाते हैं। जनाब ने फिर विज्ञापन क्यों छपाया ?

इजाज अली साहब बोले—मैंने नहीं छपाया !

बात काटकर अहमद अली साहब बोले—जनाब, मुझे बेवकूफ बनाते हैं।

इजाज साहब बोले—सुनिये तो……।"

अब इसके बाद दोनों में अजीब तरह की दौड़ हुई। इजाज अली चूँकि मुझे स्वयं दुण्डले में बेवकूफ बना चुके थे, और मामिला समझ गये थे, कि हो न हो, वही मामिला है। और अहमद अली को नरमी से समझाना चाहते थे, और उधर अहमद अली साहब का यह हाल, कि क्रोध में आ गये। वे मजाक के आदी ही नहीं थे। दोनों ने एक ही समय बोलने की कोशिश की ! एक बोला—"सुनिये तो।" दूसरा चीखकर बोला—"मैं सब कुछ समझ गया !" वह बोले—"गलत-फहमी··।" उन्होंने कहा—"गलत फहमी की ऐसी तैसी !"···उन्होंने कहा—शुभान अल्लाह···!···"—" वे बोले—'मुकदमा चलाऊँगा।' वे बोले—"मक्कार !"……उन्होंने कहा—"बस……।" उन्होंने कहा—"धोखेबाज !……बेहूदा……अमहक……।" मतलब यह, कि इजाज साहब को बहुत जल्द अहमद अली साहब को काबू में लाने की कोशिश में लग जाना पड़ा।

अब ऐसे अवसर पर हमें उचित जान पड़ा, कि बीच-बचाव करें। मैं अपने दोस्त के साथ घूम कर दङ्गल के स्थान में पहुँचा। अब जरा मजा तो देखिये, कि हम तो इस नेकनियती से पहुँचे। हमारे दोस्त आगे थे और मैं पीछे। सहसा इजाज साहब की नजर मुझ

पर पड़ी। ईश्वर जानता है, मुझे तनिक भी आशङ्का न थी, मगर जरा सोचिये तो, कि वह जालिम अहमद अली को छोड़कर मुझ पर जो झपटा है, और यह खाकसार बरामदे की सारी सीढ़ियों को लाँघता हुआ जो डाक गाड़ी की तरह स्टार्ट हुआ है तो फिर पीछे मुड़कर भी न देखा, पीछे फिर कर देखने की मुहलत ही किसे थी। हाते की दीवाल को फाँद कर जो खेतों खेत भागा हूँ, तो फिर स्टेशन पर ही पहुँच कर दम लिया। गाड़ी के आने में इतनी देर थी, कि इजाज साहब झगड़ा खतम करके आ न सकते थे। अतः इतमीनान से फौरन घर की राह ली, क्योंकि विश्वास था, कि वह जालिम इजाज जो मेरे ऐसे तीन आदमियों के लिये काफी है, मुझे जीता न छोड़ेगा।

दूसरे दिन मेरे दोस्त भी लौटकर आ गये। कहने लगे, कि यार, उसने तो मारते-मारते छोड़ा।

बड़ी मुश्किल से उन्होंने साबित किया, कि मुझसे बिलकुल अपरिचित हैं! अहमद अली साहब को समझाने में इजाज साहब का काफी समय लगा, और वे समझ भी गये और न समझते कैसे; क्योंकि पहले तो दाँव-पेंच इजाज अली साहब को अहमद अली साहब से अधिक मालूम थे और फिर वैसे भी वे इजाज अली साहब की अपेक्षा ताकतवर कम थे। अतः विवश होकर उन्हें मामिले को समझना ही पड़ा। इस घटना को तो केवल बीच का एक भाग समझिये, कहानी के मुख्य भाग को तो मैं अब ले रहा हूँ।

× × ×

किसी ने कहा है, मेरी जान चाहने वाला बड़ी मुश्किल से मिलता है।

इन कठिनाइयों पर विचार कीजियेगा। एक मदारी को बन्दर बड़ी मुश्किल से मिलता है। "शाकी" को 'चुगनाई" या चुगताई को खूबसूरत माशूक! एक बैल को हल चलानेवाला! बहुत खूब······! शायर ने यह न देखा, कि चाहने वाला और बिलकुल चाहने वाला!" एक ऐसी चीज है, जिसे आसान समझना वैसा ही मुश्किल है, जैसे किसी बकरे को इङ्गलिस्तान का प्रधान मन्त्री बना देना, किसी बैल को जर्मनी के युद्ध मन्त्रित्व के पद पर बिठा देना, या फिर किसी बैल को सुन्दर सी स्त्री मिल जाना, या किसी मुर्गे को रूम का बादशाह बना देना! प्रश्न तो केवल यह है, कि इन चाहने वालों और बिल्कुल चाहने वालों के मिलने की कठिनाइयों को अलापने की क्या जरूरत, और फिर इनका उद्देश्य!! लाहौल विलाकूह!! असली चीज तो एक राय होना है। एक राय होना अलबत्ता बहुत ही मुश्किल है। मुश्किल से मतलब दण्ड पेलने या कुश्ती लड़ने से नहीं; बल्कि सौभाग्य, या सुअवसर इत्यादि······।

अब जरा ध्यान दीजिये, कि इन "ब" साहिबा की जाति वाली खूबियाँ मेरे लिये एक नियामत और बहुत बड़ी ईश्वरी भेंट-सी मालूम होने लगीं। चिट्ठी-पत्री एक ऐसी चीज है, कि न केवल सम्बन्ध और विचारों का ही पता लग जाता है, बल्कि दोनों तरफ के लोग एक दूसरे की दिली इच्छाओं तक को जान जाते हैं। एक ही मजाक को पसन्द करने वालों, एक सम्बन्ध के मनुष्यों, और एक ही विचार के हृदय वालों की अपेक्षा विचारों का एक में मिल जाना सबसे अधिक अच्छा है। इसी का नाम संसार में रक्खा ही क्या है? एक राय वालों में चुम्बक की सी एक आकर्षण शक्ति होती है, जो दोनों को एक-दूसरे

की ओर खींचती है, और यही खिंचाव वास्तव में दुनिया की सभी ताकतों से श्रेष्ठ है। इसका उचित परिणाम एक और होता है। वह यह, कि एक दूसरे के साथ रहने की इच्छा पैदा होती है। हर समय अपने साथी-विचार के साथ रहकर आनन्द उठाने की तरकीब की चिन्ता अगर दोनों मर्द हैं तो सवाल दूसरा है, लेकिन अगर दोनों में से कोई औरत है तो दोनों विवश हैं। चाहे प्रेम हो, चाहे न हो, चाहे चाह हो या न हो, अच्छा है, कि दोनों एक दूसरे के साथ शादी कर लें। इससे बढ़कर कोई दूसरी तरकीब हो ही नहीं सकती। अगर एक राय अथवा एक मजाक के औरत मर्द, भाई बहन की तरह एक साथ रहें; तो सोसाइटी क्या कहेगी? अतः इस सवाल का हाल हमारी "सभ्यता" ने शादी और केवल शादी रक्खा है। लाहौल विलाकूह !! नहीं तो, आप ही कोई तरकीब बताइये, कि एक विचार की सभ्य औरत की दोस्ती का मजा कैसे उठाया जा सकता है! यही तो था वह मसला, जो इन घटनाओं के बाद मेरे सामने आया। बीवी और चाहने वाली बीवी को हासिल करने की इच्छा मेरे हृदय के एक-एक तार में थी। यह अब मालूम हुआ, कि इस अभिलाषा की खानापुरी आसानी से हो सकती है। लेकिन इस अभिलाषा की खानापुरी दूसरी तरह से असम्भव थी। सवाल यह था, कि अब क्या किया जाय?—जरा विचार तो कीजिये, कि एक नवजवान सभ्य लड़की की पवित्र स्मृति के लिये ये विचार क्योंकर बोझ के समान न होंगे? वह कलम जो उसको 'बहन' 'बहन' लिखते घिसी जाती है, किस तरह उसके लिये कोई दूसरा सम्बन्ध ढूँढ़े। आखिर वह अपरिचित बहन क्या सोचेगी? भाई के अतिरिक्त और किसी सम्बन्ध का जोड़ना! उस बेचारी को

यह विचार ही कितना कष्टकर होगा। यही सोचेगी, कि मर्दों की आँखें सब जगह बीवी की ही तलाश करती हैं।

लेकिन फिर वही निवेदन है, कि क्या किया जाय? बहुत सोच-बिचार के बाद इस पढ़ी-लिखी और सभ्य बहन साहिबा को दो-तीन पत्रों में घुमा-फिरा कर आखिरकार लिखना पड़ा, कि ·····नहीं तो तुम्हीं बताओ, कि कौन सी सूरत है, जो हम तुमसे न छूटें और न तुम हम से। तुम सदा हमारे पास रहो, और हम तुम्हारे पास।"

इसका जवाब मुझे वही मिला, जिसकी आशा थी, और जो सचमुच मिलना चाहिये था। मेरी सभ्यता, मेरी नेक-नीयती को देखते हुये उन्हें बिलकुल आशा न थी, कि मैं ऐसा कमीना और धोखेबाज निकलूँगा। वेहयाई और बेशरमी की भी कोई हद है। न जबान का विचार, और न कायदे का कोई ख्याल। यह है नवजवानों की हालत। फिर भी नवजवान लड़कियाँ ऐयारों और मक्कारों की चिकनी-चुपड़ी बातों में आ जाती हैं। सच बात तो यह है, कि इस दुनिया में किसी का इतबार नहीं। इत्यादि, इत्यादि !! मैं इसका क्या जवाब देता! इस बात के अलावा, अपनी नेकनियती का विश्वास दिलाऊँ! विवशता प्रकट करूँ !! उनसे इसके अलावा दूसरी तदबीर पूछूँ, कि तुम्हीं बताओ, कि वह कौन सी तदवीर है, कि हम और तुम सदा-सदा के लिये साथ रहें। उन्हें समझाया, कि बहन भाई बनकर ऐसा होना असम्भव है, फिर मुँह बोले बहन भाई के सम्बन्ध "लाचारी" और "कमजोरी" की तरफ उनका ध्यान दिलाकर काजियों की उन चंगेजी कारगुजारियों की चर्चा की जो आमतौर पर वे सम्बन्ध के भाइ-बहनों के साथ जारी रखते हैं और फिर साफ-साफ उन घटनाओं की चर्चा

की जो देखने में आई हैं, कि किस तरह एक "बहंगी" काजी ने दो चचाओं की सन्तान को, जो बहन भाई कहे जाते थे, बिना किसी चीं-चपड़ के गड्‌-बड्‌कर दिया।

मेरी इस चिट्ठी का जवाब उन्होंने और भी कड़ुवा दिया और मुझे इस प्रकार आड़े हाथों लिया, कि मैं किये पर पछताया, और कोशिश की, कि अपने शक वापस ले लूँ, और वही पुराना सम्बन्ध ज्यों का त्यों कायम रह जाये, लेकिन असम्भव हो गया। उन्होंने लिखा, कि अब मैं बे पर्द हो गया, और अच्छा हुआ, कि मेरी असलियत मालूम हो गई, इसके अलावा मुझे हर तरह से लथाड़ा। परिणाम यह निकला, कि चिट्ठी-पत्री केवल नसीहतों का ढेर होकर रह गई! इधर मैं भी कहाँ तक जब्त करता! और कहाँ तक बुरा-भला सुनता। अतः मैंने लिख दिया, कि जो आप कहें, ठीक है। मैं इस लायक नहीं, कि कोई शरीफजादी मुझ पर भरोसा करे। अच्छा हो, कि आप मेरे सभी अपराधों को माफ कर दें। और मुझे जहन्नुम में डाल दें। किस्सा खतम!—

इसके बाद उनका एक और पत्र धन्यवाद का आया, कि मैंने उनके साथ जो एहसान किया है, वे कभी भूल नहीं सकतीं। मैं स्वयं बददिल हो गया था! फिर न उनका कोई पत्र आया, और न मैंने ही उन्हें कोई पत्र लिखा।

इस पत्र-व्यवहार के बन्द होने के बाद मुझे सहसा ऐसा मालूम हुआ, कि मानों सबसे अच्छे दोस्त ने मुझे छोड़ दिया। एकान्तता-सी मालूम होती। तबीयत हमेशा भारी रहती, और एक हमदर्द और साथी-विचार दोस्त की जुदाई का बहुत बड़ा अफसोस हुआ। यह

सोचकर, कि मजबूरी है, मैंने दिल पर पत्थर रख लिया, और जिस तरह आदमी दूसरी बातों को भूल जाता है, मैं भी दो-तीन महीने में अपने साथी-विचार और प्रिय दोस्त को भूल गया। विचार करके देखा तो वहीं का वहीं था। कौन लड़की थी ? क्या नाम था ? किस खान्दान की थी ? क्या उम्र थी ? क्या करती थी ? कैसी शूरत शक्ल थी ? पहेली बिलकुल पहेली ही बनी रही। न मैं उसे जानूँ, और न वह मुझे। खैर अच्छा हुआ, जो हुआ।

× × ×

इस पत्र-व्यवहार को बन्द होने के कोई तीन महीने बाद ही मैं एक और जरूरी काम में लग गया। वह यह, कि आदमी, बैल और बाबू, इन तीनों में से सबसे अच्छा कौन ? पाठक, आप तो आँख बन्द कर कह देंगे, कि "हम।" यह फिलासफी थी। एक पेचीदा गुत्थी। क्योंकि ध्यान से देखा जाय तो उसका सुलझाना बहुत कठिन है। बैल और बाबू को लीजिये। मिहनती दोनों; और खूबसूरत भी दोनों। बल्कि बाबू एक बैल से कहीं अधिक खूबसूरत ! हाँ, सींगों के बारे में अवश्य मानना पड़ेगा, कि बैल के दो सींग होते हैं और बाबू के एक। उसके सिर पर और इसके हाथ में, जिसे लगाये वह आमतौर पर कागज पर घिसता रहता है ! कोई कोई फैशनेबुल बैल भी (कोल्हू वाले) ऐनक लगाते हैं। आदमी भी ऐनक लगाते हैं। बैल और बाबू दोनों चरित्र की दृष्टि से बुरी चाल-ढाल के होते हैं। आदमी भी बुरे चरित्र के होते हैं। मतलब, कि यह मसला कुछ पेचीदा है और इस मसले के हल के लिये खुदा ने मुझे आदमी से बाबू बनाकर एक रेलवे स्टेशन के कमरे में ला बैठाया ? जहाँ दिन रात बैठा या तो

'गिट मिट' करता रहूँ और या टिकट बेचता रहूँ। एक छोटा-सा अस्पताल भी स्टेशन से मिला हुआ था और यही सभ्यता और मनुष्यता की बस्ती थी।

एक सी नौकरी करने वाले इन बाबुओं के क्वार्टर दूर तक बने हुये थे। डाकखाने वाले के क्वार्टर हमारे क्वार्टरों से कुछ अलग थे। अस्पताल वालों की डेढ़ ईंट की चहारदीवारी कुछ दूर पर थी। अधिक से अधिक दिल बहलाव का सामान यहाँ यह था, कि दो एक शादी-शुदा या बिनाशादी शुदा साथियों के साथ बैठ कर अपने-अपने मुहकमों के बुरे प्रबन्ध पर विवाद कर लिया; कुछ बुराई करली, और कभी कभी चुगुलखोरी से दिल बहलाया। इन बातों को छोड़कर देखा जाय तो जिन्दगी कठिन हो रही थी। खुदा की पनाह! लेकिन सभी दिन एक से नहीं रहते। आखिरकार हम भी तो कभी फूलों में बसे थे। अतः सहसा घटनाओं और भाग्य, दोनों ने मिलकर पलटा खाया, बहुत जल्द एक निहायत ही मनोरंजक···।

× × ×

एक दिन की बात है, कि ग्यारह बजे वाली सवारी गाड़ी मैंने निकाली। स्टेशन खाली हो गया, कि प्लेटफार्म पर से एक बार एक आवाज आई—"कुली···कोई कुली है।" चूँकि आवाज किसी औरत की थी, अतः मैंने दफ्तर की खिड़की से झाँककर देखा। क्या देखता हूँ, कि एक औरत बुर्का ओढ़े हुये अपने सामान के पास खड़ी है और कुली को आवाज दे रही है। छोटे स्टेशनों पर यों भी रोशनी का इन्तजाम ठीक नहीं होता। और अँधेरा वैसे भी था। अतः मैंने फौरन बिजली का टार्च निकाल कर देखा, कि यह कौन है! मैंने बहुत ही

सीधे साधे ढङ्ग से और रेलवे के बाबू की तरह उस शरीफ औरत के सुंदर चेहरे पर रोशनी डाली। क्या देखता हूँ कि एक चांद सा नव उम्र और खूबसूरत चेहरा बिजली की रोशनी से चकाचौंध होगया। और इस बदतमीजी से बचने के लिये उस शरीफ औरत ने अपना मुँह मोड़ लिया।

मैंने फौरन जमादार को बुलाया, कि कुली का काम करे और स्वयं भी कमरे से बाहर निकला, मुझे आश्चर्य हो रहा था कि यह कौन औरत है। जमादार से उन्होंने पोस्ट मास्टर मुहम्मद हुसेन के मकान पर जाने की इच्छा प्रगट की। मैंने आगे बढ़ कर बहुत ही सभ्यता के साथ हुक्म दिया, कि अभी अभी पोस्ट मास्टर साहब के क्वार्टर में सामान लेजाओ और उन्हें पहुँचा आओ।

इस शरीफ औरत ने अपना चेहरा नकाब से ढक लिया था। लेकिन एक कोने से इस खाकसार को देख रहीं थीं और मैं स्वयं विवश होकर उनकी दर्शनीय उँगुलियों और सुन्दर हाथ को देखकर··· काले बूट को। तेजी के साथ वे मेरे बराबर से निकल कर मुझे ध्यान से देखती हुई चली गई।

अब सवाल यह था, कि यह कौन हैं! उनके उतरने की शान को तो देखिये! नवजवान और बिलकुल अकेली! मैं टिकट माँगना भूल गया या वे देना भूल गईं। या शायद बिना टिकट होंगी। लेकिन यह कौन है! यह सवाल एक विशेष कारण से भी पैदा हुआ। पोस्ट मास्टर मुहम्मद हुसेन साहब अजीब आदमी थे। पोस्ट मास्टर क्या, बल्कि सूरत शकल और ऊँचे गुणों का जहां तक सम्बन्ध है, पूरा काल का दूत उन्हें समझिये। मुझसे हद दर्जे की दुश्मनी और विरोध

रखते थे। कारण यह है, कि यहाँ आने के पहले मैं अस्थायी तौर पर एक स्टेशन पर चार दिन के लिये गया। क्योंकि स्टेशन मास्टर साहब ने छुट्टी ली थी। और इसी बीच में उनका तबादिला इस 'जगह' से उस जगह का हुआ। वे टिकट लेने आये। मेरा नियम था, कि दफ्तर का कमरा बन्द रखता था, कि कान खाने वाले लोग कमरे में न घुस आयें। अब ये टिकट लेने के लिये जो आये, तो पूछते हैं:—

"अजी बाबू साहब, यह साँभर वाली कब आयेगी?"

अब इस सवाल के अर्थ पर ध्यान दीजियेगा? सांभर जाने वाली या आने वाली? मैंने जवाब दिया—इस प्रकार की कोई गाड़ी नहीं आयेगी?

बोले—जी हां!

मैंने कहा—हूँ!

क्रोध से जलकर बोले—माशा अल्लाह, तबीयत में मजाक कुछ अधिक है!

मैंने कहा—अपने प्यारे सिर की कसम, मुझे मजाक से क्या मतलब?

इसके बाद जब उन्हें विवश होकर ठीक से अपना सवाल फिर से करना पड़ा, तो मैंने भी ठीक समय बता दिया। अब कहने लगे—आप तो बहस और हुज्जत करते हैं।

मैंने जवाब दिया—मेरे नाना वकील थे।

भन्ना कर बोले—"खूब"! और चले गये। लेकिन फिर बहुत जल्द आये और उस स्टेशन का टिकट मांगा, जिस पर मैं और वे,

दोनों थे। हालांकि खूब जानते होंगे, कि तीन घण्टे पहले टिकट नहीं मिलना चाहिये। मैंने खिड़की ही से उनकी तरफ ध्यान से देखकर कहा—सब टिकट बिक गये।"

वे बोले—कैसे ?

मैंने कहा—लोग दूने और ड्योढ़े दाम देकर लेगये।

मेरी इस गुस्ताखी पर वे बहुत बुरा माने, जिसके लिये मैंने बहुत ही साफ दिल से उनसे छुट्टी मांगी। फिर स्वयं ही कुछ सोच कर बोले—क्यों जनाब, क्या एक भी टिकट नहीं ?

मैंने कहा—एक भी नहीं !

"तो बना दीजिये टिकट !"

"टिकट बनाना जुर्म है।"

"फिर मुसाफिर कैसे जायँगे ?"

मैंने कहा—आपको मुसाफिरों से मतलब ?"

वे बोले—"अरे साहब, मैं स्वयं जाऊँगा।"

मैंने कहा—आप जायँगे ? आप······आप ?

कहने लगे—जी हां !

मैंने कहा—मैं बताऊँ ?

मुँह फाड़कर बोले—बताइये !

मैंने कहा—अगर न जाइए !

मेरा यह कहना था कि बहुत बिगड़े और जब बहुत लड़े तो मैंने उन्हें समझाया, कि वक्त के पहले आपको परीशान करने का कोई अधिकार नहीं !

इसके बाद जब मैं इस स्टेशन पर मुस्तकिल होकर आया, तब

उनसे साहब सलामत हुई। उनकी बीवी साहबा ने एक दिन मौलूद शरीफ कराया था। मैं उनसे माफी माँगने के उद्देश्य से उसके इन्तजाम में इतने जोर-शोर से हिस्सा लिया, कि वे शायद बहुत कुछ मेरे बारे में राय बदल देंगे। लेकिन वे मेरे सम्बन्ध में अपनी बहुत ही स्थिर राय कायम कर चुके थे, अर्थात् यह, कि मैं बहुत बड़ा बदमाश हूँ। उनके न लड़का था, और न लड़की। केवल उनकी बीवी थीं और ये उनके एकलौते शौहर। ऐसी हालत में यह घटना और भी अधिक आश्चर्य का कारण थी, कि उनके यहाँ यह नवजवान लड़की क्यों और कैसे आई? लेकिन मुझे इससे क्या विवाद? विचार मन में पैदा हुआ, और चला गया। लेकिन इस घटना को कठिनाई से दस ही दिन हुये होंगे, कि एक दूसरा ही मामिला सामने आया।

एक तो पोस्टमास्टर साहब स्वयं ही आश्चर्यजनक थे, और दूसरे उनके घर में यह एक और आश्चर्यजनक चीज आ गई। मालूम हुआ कि पोस्ट मास्टर साहब की भांजी हैं और बराबर आती हैं। अब इससे अधिक मालूम होने से रहा? किसकी शामत आई थी, जो पोस्टमास्टर साहब से जाकर पूछे। अस्पताल, डाकखाना और रेलवे की युवक पार्टी में कुछ चर्चा जरूर चली और बस, मतलब, कि मामिला बिलकुल सामने ही था, कि मामिले की दूसरी सूरत हो गई।

एक दिन की बात है, कि मैं सवेरे की गाड़ी निकाल कर बैठा हुआ रजिस्टरों की खानापुरी कर रहा था, कि भिशतिन आई। यह उस भिश्ती की बीवी के ढङ्ग की सास थी, जो क्वार्टरों में पानी भरता था। उसने मुझसे एक अनोखी बात कही। रहस्यपूर्ण स्वर में चुपके से कहा कि—"पोस्टमास्टर साहब की माँजी ने आपको सलाम कहा है

और कहा है, कि अगर आप मेरा एक काम कर दें तो अच्छा हो। लेकिन पोस्टमाटर साहब से न कहें।"

अब आप सोचिये, कि यह धूल में लट्ठ ही तो और क्या! मैं सन्देश सुनकर बौखला गया। कुछ घबड़ा गया। जी में यही आया, कि जल्दी से आईना देखूँ। मैंने पक्का वायदा कर लिया और फौरन जो बात जाननी चाही, तो गायब! यह तो हम भी जानते हैं, कि भांजी हैं, लेकिन क्यों आई हैं? किसकी लड़की हैं, इत्यादि, इत्यादि। अलावा इस बात के, कि कुमारी हैं, और कोई जवाब न मिल सका। तो फिर यह तो कोई बात न हुई? हम स्वयं जानते थे, कि कुमारी हैं। खैर, मैंने कहा, कि मेरी तरफ से कह देना, कि मैं हर तरह सेवा के लिये तैयार हूँ, और आप विश्वास रक्खें।

अब जरा सोचिये तो कि कहाँ तो मैं इस प्रतीक्षा में था, कि शीघ्र मुझसे किसी सेवा के लिये कहा जाता है और कहाँ यह बात, कि चुड़ैल भिश्तिन की सूरत देखने को तरस गया। शाम को मिली भी तो कहने लगी, कि मैंने जाकर कह दिया था। फिर, फिर कुछ नहीं कहा। न दूसरे दिन, न तीसरे दिन और न चौथे दिन। मानों यह मामिला यहीं का यहीं खतम हो गया। बेकार मेरे पीछे एक झगड़ा-सा लग गया। जब बात जहाँ की तहाँ खतम हो गई, तो मैं भी चुप हो रहा। किसी से मैंने चर्चा तक न की।

दस बारह दिन बीत गये और मैंने भी भिश्तिन से पूछा, कि क्या मामिला है, बल्कि इस बात का विचार भी जाता रहा था, कि एक और भी नया मामिला सामने आया।

× × ×

मेरा नियम था. कि कभी-कभी शाम को रेल की पटरी-पटरी दूर तक टहलता चला जाता था। एक दिन की बात है, कि शाम को जी घबड़ाया तो घूमने के लिये चला गया और रोज जहाँ तक जाता था वहाँ से कुछ दूर निकल गया। जब लौटने लगा हूँ तो भुटपुटा-सा समय था। स्टेशन पहुँचते-पहुँचते अँधेरा हो गया। मैं तेजी से चला आ रहा था और बड़े सिगनल के इस पार निकल आया था। और इसी चाल से एक बहुत गहरी खंदक के पास से निकला। यह खन्दक क्या थी, यों कहिये, कि एक लंबा-चौड़ा गढ्ढा था। पटरी एक जगह से कट गई थी। इस जगह से मजदूरों ने इतनी मिट्टी निकाल ली थी, कि एक गहरा गड्ढा बन गया था। यह गड्ढा वैसे तो रेल की पटरी से काफी दूर था। लेकिन पटरी की तरफ बरसात से किनारे कट जाने के कारण इस तरफ का किनारा इतना तंग होगया था, कि दूर तक अर्थात् गड्ढे की सतह तक ढलुवाँ दीवाल-सी बन गई थी। ऐसी तङ्ग कोई रेल की पटरी के किनारे-किनारे जा रहा हो और इस तरफ पैर पड़ जाय तो फिसल कर सीधा गड्ढे की तह में जा पहुँचे। कई बार ऐसा हुआ, कि मवेशी उसमें जा गिरे। जितनी भी इस तरफ से चढ़ने की कोशिश करो; मिट्टी खिसकती जाती है। अब जो मैं तेजी के साथ इस गड्ढे से निकला, तो मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही, जब मैंने देखा, कि कोई हिलने वाली चीज उस गड्ढे में है। वह चीज भी क्या! विश्वास मानिये कि पोस्ट मास्टर साहब की भाँजी।

मेरे मुँह से निकला "अरे!" और मैं ठिठक कर रह गया। मैंने ढलुवाँ हिस्से को देखा। मालूम हुआ कि इस तरफ से चढ़ने की व्यर्थ कोशिशें बहुत सी हो चुकी थी। मैं खूब अच्छी तरह जानता था, कि

इसमें से निकलना असंभव है, जब कि कोई ऊपर से मदद न करे। मुझे देखकर वे अधिक परीशान हो गईं। इतनी अधिक कि इज्जत के कारण मुझे कुछ पीछे हटना पड़ा। मैंने दबी जबान से गिरने का कारण पूछा, जिसका जवाब कुछ न मिला, इस पर मैंने इस बात की ओर उनका ध्यान दिलाया कि संभव नहीं, कि बिना मदद के वे बाहर निकल सकें, लेकिन उन्होंने इस बात की भी नोटिस न ली। इस पर मैंने कहा—अगर आप दूसरी तरफ से कोशिश करें तो मैं मदद करूँ!' इसका भी कुछ जवाब न मिला। उनका चेहरा दूसरी तरफ था। अब सिवाय इसके और क्या उपाय था, कि मैं उन्हें इसी हालत में छोड़कर पोस्ट मास्टर साहब को खबर करूँ। अतः अब मैंने वह अन्तिम निवेदन किया, जो मालूम हुआ, कि मुझे पहले ही कहना चाहिये था। मैंने कहा—"मैं अभी जाकर पोस्ट मास्टर साहब को भेजता हूँ।" यह कह कर जो मैं तेजी से मुड़ा हूँ तो जैसे घबड़ा कर बोली—"नहीं!"

मैं चकित होकर खड़ा का खड़ा रह गया। लेकिन कुछ न बोला। और जब उन्हें यकीन होगया कि मैं न बोलूँगा, तो वे स्वयं बहुत ही धीरे से, नरमी के साथ, बोलीं—"किधर से निकलूँ!"

जी में तो यही आया, कि कह दूँ! "फंसी रहो!" लेकिन मैं गढ्ढे के किनारे पर आ गया और घुटने टेककर झुककर मैंने हाथ बढ़ाया और कहा—आप उधर से आ जाइये। मेरा हाथ पकड़ कर ऊपर चढ़ आइये।

उन्होंने पूछा तो फिर मैंने कहा—मैं अभी पोस्ट मास्टर साहब को बुला लाऊँ!

घबड़ाकर बोली—नहीं......!" और यह कहती हुई, मेरे हाथ की तरफ बढ़ीं, लेकिन मेरा बढ़ाया हुआ हाथ नहीं पकड़ा। बल्कि स्वयं दीवाल की टेढ़ी मेढ़ी सतह को पकड़ने की कोशिश करने लगी। मैंने स्वयं हाथ बढ़ाकर उनकी-कोमल कलाई पकड़ ली। उनको तोलना चाहा। सोचा कि भर लूँ डोल की तरह! लेकिन आप जानते हैं, आजकल के हम ऐसे नवजवानों को! देखने में कमजोर, लेकिन ताकत बहुत ज्यादा। बहर हाल यह असंभव था, अतः मैंने उनसे कहा, कि मैं आपको ऊपर घसीटता हूँ, और आप दीवाल में पैर जमाकर चढ़ आयें, मैं उनका दाहिना हाथ पकड़े था। उन्होंने अपना दाहिना पैर दीवाल पर टिकाया। उनका बायाँ हाथ अपने खूबसूरत चेहरे को छिपाने में नहीं, बल्कि छिपाने के विचार में संलग्न था। अतः मैं कह नहीं सकता था कि इस हाथ से भी काम लो, अर्थात् दूसरे शब्दों में अपना सुन्दर चेहरा मुझे अच्छी तरह दिखाओ। मालूम होता है, कि इससे पहले न तो उन्हें इस प्रकार गढ्ढे में गिरने और गिरकर चढ़ने का मौका मिला था और न कभी इस प्रकार ऊपर खींची गई थीं। मैंने उन्हें जोर से खींचा, उनका बाँया पैर भी जमीन से उठा। अपने कोमल शरीर को उन्होंने झुला दिया। सारे शरीर का जोर दाहिने पैर पर पड़ा, जो दीवाल के किसी कमजोर स्थान में टिका हुआ था। पैर के नीचे की मिट्टी टूटकर खिसकी। बायाँ हाथ चेहरे की लाज रखने में लगा हुआ था। और शरीर ने जो सहसा झटका खाया, तो स्वयं घूम गईं। क्या करती बेचारी। लाज गई चूल्हे में। दूसरे हाथ से भी एक जोरदार झटके के साथ मेरी कलाई पकड़ी। उनका पैर खिसक चुका था। इसी खींचा-खींची में मेरे घुटने और पैर

के नीचे की भी मिट्टी खिसकी। इससे भार का क्रम बिगड़ गया। छोड़ने की चीज वैसे भी नहीं थी। परिणाम स्पष्ट है! उनका खिंचाव कहिये या न्यूटन वाला जमीन का आकर्षण! "गड़म-घम!" इस खाकसार को धूल, मिट्टी और कंकड़ों के साथ, चाहने या न चाहने पर, उनके उपर गिरना पड़ा।

वे सिर के बल और मैं मुँह के बल। इस तरह गिरे, कि हम दोनों की मौत की सूली बन गई। कुछ पता नहीं, कि कैसे उठना पड़ा? चोट के बारे में किसी से कुछ पूछने की याद ही न रही। सवाल यह था, कि अब क्या किया जाय? सिवाय इसके कोई उपाय न दिखाई पड़ा, कि उनको ऊपर चढ़ा दूँ। लेकिन मुझे फिर कौन निकालेगा। उन्होंने सकरुण स्वर में कहा—"खुदा के वास्ते•••।" कंठ भर आया। मुँह पहले ही दूसरी तरफ था। मैंने फिर कहा—'मैं जाकर पोस्ट मास्टर•• •।" बात काट कर उन्होंने कहा—"नहीं, मुझे निकाल दीजिये जल्दी।"

हमने एक सिनेमा में देखा था, कि एक लड़की को एक आदमी ने दीवाल के ऊपर चढ़ाया था। अपने दोनों हाथों की उँगुलियाँ फँसा ली। इस पर लड़की ने अपना बायां पैर रक्खा। दोनों हाथों से आदमी का सिर पकड़ कर दूसरा पैर आदमी के कन्धे पर रक्खा। और ऊपर पहुँच गई। यह ढङ्ग मुझे बहुत ज्यादा पसन्द आया था। अब तकदीर की खूबी से उसके अनुसार काम करने का अवसर भी मिला। दूसरी कोई सूरत ही संभव न थी। अतः जब मैंने उँगुलियों में उँगुलियाँ फँसाकर उनसे पैर रखने के लिये कहा, तो मालूम हुआ, कि यह तरकीब गलत है। और उस समय तक इसके अनुसार काम नहीं हो सकता,

जब तक कि हिन्दुओं की देवी की तरह हमारे चार हाथ न हों। उन्होंने इस तरफ ध्यान भी न दिया। वह मजमून, कि लाद दे, लदा दे। पैर पकड़ने की हिम्मत न हुई। पंजे के पास से मैंने उनकी सलवार पकड़ कर पैर के नीचे अपने हाथ की उँगुलियाँ फँसाकर जरूरी हिदायत दे और हाथों को ऊपर खींचा। अब सिवाय इसके और क्या चारा था, कि या तो वे सिर के बल औंधी गिरें या इस खाकसार के गले में हाथ डालकर मेरे कन्धे पर अपना दूसरा पैर रक्खें। लेकिन उन्होंने इस खाकसार के गले में हाथ डालने की अपेक्षा दीवार कुरेदने की ठहराई। काम चलता, जब कि वे फौरन ही अपने पैर से मेरे कन्धे को आदर दे देतीं, लेकिन उन्होंने यह सचाई भी पसन्द न की, और पैर भी दीवाल में अड़ाना चाहा। मैंने बहुत कुछ कहा, लेकिन न मानी। परिणाम स्पष्ट है, कि मुझे छोड़ना और उन्हें लुढ़कना पड़ा। मेरी जान तो जल उठी। और साथ ही मेरा ध्यान अब दूसरी ओर आकर्षित हुआ। कोने की तरफ जाकर निश्चिन्तता के साथ बैठते हुये मैंने कहा—"आपकी अगर इच्छा यही है, कि रात गड्ढे में बीते तो मुझे कोई इन्कार नहीं।"

"मुझे निकालिये।"

"आप स्वयं मुझे निकालिये!"—मैंने कहा—"इस गड्ढे में गिरने के लिये बहुत सख्त मुमानियत है।"

उन्होंने कहा—"खुदा के लिये ·····।"

मैंने कहा—"लेकिन आप नहीं निकल सकतीं!"

"मुझे निकालिये······मैं उम्र भर इहसान न भूलूँगी!"

मैंने कहा—इसमें हमें गिरना ही न चाहिये था। यह गड्ढा

हमारे धोबी के गदहे को गिरने के लिये खास तौर से बनाया गया है।

वे बोलीं—खुदा के लिये दया कीजिये!

मैंने कहा—"सुनिये, आपके जी में स्वयं निकलने की इच्छा नहीं है। दो सूरतें हैं आपके निकलने की। या तो मैं यहाँ से चिल्लाऊँ और कोई आये और हम दोनों को निकाले।"

"नहीं नहीं……।" घबड़ाकर बात करते हुये उन्होंने कहा—"पोस्टमास्टर साहब को……।"

मैंने कहा—उन्हें बुला दूँ।

"नहीं, नहीं, उन्हें खबर तक न हो!"

मैंने कहा—क्यों?

वे बोली—मैं आपको फिर बताऊँगी।

मैंने कहा—"दूसरी सूरत यह है, कि आप……को मुझसे शायद कंठ से लगना पड़ेगा और बिना इसके आपका निकलना असम्भव है।…… अर्थात् जब तक आप मेरा सिर न पकड़ें!"

वे सकरुण स्वर में बोलीं—"कि खुदा के वास्ते रहम कीजिये……रहम……।" कंठ में अधिक आर्द्रता आ गई।

मैंने घबड़ाकर कहा—अजी लीजिये। और यह कहकर मैं उनकी तरफ बढ़ा—"बनावट और लाज को डालो चूल्हे में!"—मैंने हाथ पकड़ते हुये कहा—"इधर आइये!"

देखते ही देखते मैंने उँगुलियों में उँगुलियाँ फँसाकर उनके लिये रकाब तैयार की। उन्होंने पैर रक्खा। लाचार होकर उन्हें मेरी गर्दन पकड़नी पड़ी। जोर जो लगाया तो गले से मिलना पड़ा। उनका कान जो मेरे पास आया तो जो मेरे जी में आया कह गया! न जाने क्या-

क्या ? दूसरा पैर मेरे कन्धे पर रखकर मेरे गले से हाथ निकालकर ऊपर पहुँचीं और मेरे कन्धे पर से उठकर मेरी नाक के पास गुजरीं तो मैंने बेचैन होकर पकड़ लिया।

"छोड़िये !" उन्होंने बैठते हुये और जोर लगाते हुये कहा !

मैंने कहा—"मुझे न निकालोगी तो मैं फँसा रह जाऊँगा ! '

घबड़ाकर उन्होंने कहा—छोड़िये।

मैंने कहा—तुमसे कुछ बातें करना चाहता हूँ।

वे बोलीं—फिर कर लीजियेगा।

मैंने कहा—' मिलो ·····गी···फिर···जवाब दोगी !"

"हाँ जरूर·····खुदा के लिए छोड़ो मुझे !"

मैंने पैर छोड़ दिया। और वे अँधेरे में गायब हो गईं। मुझे लगातार पन्द्रह निमट तक बराबर चिल्लाना पड़ा, तब कहीं जाकर चौकीदार ने मेरी आवाज सुनी और मुझे उसमें से बाहर निकाला।

× × ×

यह सच्ची बात है, कि इस प्रकार की मुलाकात आम तौर से कष्टकर और बहुत ही कष्टकर होती है। रात भर मुझेअधिक कष्ट और व्याकुलता रही। मुलाकात इस तरह थोड़े समय की थी, कि बात तक न कर सका। हरदम वही सूरत सामने थी। सवेरे काम में मन न लगता और इसी उधेड़-बुन में था कि वही बुढ़िया मिश्तिन आई और एक चिट्ठी ले आई।

पहले तो मैंने यह समझा, कि नूतन खामेन के मकबरे का कोई पुराना दस्तावेज हाथ लगा, लेकिन बहुत जल्द मालूम हो गया, कि नहीं। बल्कि गड्ढे वाले दोस्त की चिट्ठी है। इस चिट्ठी की लिखावट ऐसी

थी, कि सभी अक्षर और शब्द चौखूँटे थे। इस चिट्ठी में लिखा था कि एक रेलवे पार्सल पीर हुसेन के फर्जी नाम से आया हुआ है, अतः वह पार्सल चाहिये।" मुझे शीघ्र ख्याल आ गया। एक छोटा-सा कोई ढाई सेर का पार्सल कपड़े से सिला हुआ था। भीतर कपड़ा और कागज भरा हुआ मालूम हुआ। लाख की मुहरें लगी हुई थीं। मैंने पार्सल दे दिया और अपने रजिस्टरों में वह कार्रवाई कर दी, जो बिल्टी खो जाने पर की जाती है। और पीर हुसेन के बनावटी दस्तखत लेकर खानापूरी कर दी। मुझे लिखने का यह ढङ्ग पसन्द आया। अतः मैंने भी इसी जिन्नाती लिखावट में एक पुर्जा भेजा और कायदे के अनुसार मिलने के लिए तकाजा किया। इसका जवाब दूसरे दिन आया और उस चिट्ठी के आते ही मेरी बेचैनी और भी बढ़ गई। क्योंकि उस चिट्ठी में दूसरी बातों के अलावा लिखा था:—

"जो गरीब और कमजोरों की मदद करता है, खुदा उसकी मदद करता है। मैं बिना किसी मदद और रक्षा के हूँ तथा आपकी मदद और सहानुभूति चाहती हूँ। विस्तार पूर्वक पत्र फिर लिखूँगी। यह भी लिखूँगी, कि मैं गड्ढे में किस तरह गिरी और यह भी लिखूँगी, कि वर्तमान परिस्थिति मेरे लिए कितनी परीशानी की है। स्वयं मेरी जान खतरे में है। मुझे आशा है, कि आप मुझ गरीब की मदद कीजियेगा ···इत्यादि, इत्यादि!"

इस चिट्ठी को पढ़कर मैं सन्नाटे में आ गया। या खुदा, यह कैसी पहेली है। मैं इस गुत्थी को किस तरह सुलझाऊँ। मेरे दिल पर उस लिखावट का चित्र-सा खिंचता जा रहा था। दो-चार सतरों के पुरजे खतरनाक चीज होने के अलावा और कुछ न थे।

कोई सप्ताह भर इसी बेचैनी में बीत गया कि एक बहुत ही छोटा सा पुरजा आया। यह कि रात को साढ़े नौ बजे मेरे घर में कोई न होगा। आप मेरी मदद कीजिये।

कहानी को संक्षेप करना है! अतः उन मार्मिक बातों की चर्चा करना नहीं चाहता, जो इस अनोखे सन्देश के परिणाम स्वरूप थी। किसी दूसरे के घर में इस प्रकार जाना एक बहुत कठिन काम था। इस लिए मुझे सलाह लेने की जरूरत पड़ी। और मुहम्मद उम्र साहब से मैंने इस इस विषय में सलाह ली। सारी घटना आरम्भ से अन्त तक कर सुनाई। इस भलेमानुष ने सिवाय 'हूँ' या 'हाँ' के मामिले में कोई खास दिलचस्पी न ली। जब मैंने बहुत कुछ खींचा-खाँचा तो कहने लगे, कि चारपाई दीवार के पास रखकर उस पर मुंठा रखकर दीवार पर चढ़ जाओ और उस तरफ कूद पड़ो।" इसके बाद क्या होगा, देखा जायगा।

× × ×

रात की ड्यूटी दूसरे क्लर्क की थी और करीब साढ़े नौ बजे मैं मुहम्मद उम्र साहब के क्वार्टर में पहुँचा। चुपके से चारपाई दीवार के करीब रखकर उस पर मुंठा रक्खा और दीवाल पर चढ़ गया। बिलकुल सन्नाटा था। हर जगह पता लगाने के बाद भी यह न मालूम हो सका, कि पोस्टमास्टर साहब कहाँ हैं? न तो कहीं बाहर थे, और एक आदमी से दरवाजा खटखटवाय, तो उसने जवाब दिया, कि नहीं हैं।

थोड़ी बहुत कठिनाई के बाद नीचे उतर गया। और सबसे पहला काम मैंने यह किया, कि दबे पाँव दरवाजे पर पहुँच कर जंजीर खोल दी, कि कहीं भागने का मामिला सामने न आये।

बिलकुल सन्नाटा था। लेकिन दालान के पास उस पार कमरे में रोशनी दिखाई पड़ी। मैं धीरे से उस तरफ बढ़ा। करीब पहुँचा तो मेरे कान में आवाज आई—बोलो।

किस तरह वह धीरे से बोल रहा था! यह कौन है? मैं धीरे-धीरे बढ़ा। दालान में पहुँचा। कमरे का एक दरवाजा बन्द था और एक खुला। जो दरवाजा बन्द था, मैं उसके पास पहुँचा। उसकी दराज में से झाँक कर जो मैंने देखा, तो पैर के नीचे से जमीन खिसक गई। असल में बात यह थी, कि कमरे में पोस्टमास्टर साहब थे और उनकी भांजी। बीच में चारपाई थी। चारपाई के इस तरफ पोस्टमास्टर खड़े थे और दूसरी तरफ लड़की—जवानी और सुन्दरता की एक जीती जागती तस्वीर! व्याकुल, परीशान, हाथ में एक टूटी हुई कुर्सी का एक पाया। इस तरह, कि अगर जरा भी पोस्टमास्टर साहब रुख बदले तो कुर्सी का पाया सिर टुकड़े टुकड़े कर दे। यह भयानक दृश्य देख कर मैं बेहद परीशान हो गया और पूर्व इसके, कि मैं यह निश्चय करूँ, कि मुझे क्या करना चाहिये और क्या मामिला है, पोस्ट मास्टर साहब ने इस भयानक लड़की से कहा—

"बोलो······बोलो······क्या मैंने तुम्हें शरण नहीं दी।" ये शब्द बहुत ही धीरे से कहा। लड़की ने इसका जवाब नहीं दिया। पोस्टमास्टर ने फिर से कहा—मैं तुम्हारे बिना जिन्दा नहीं रह सकता। तुम्हें आज वादा करना पड़ेगा। मुझसे शादी करके तुम तकलीफ में नहीं रहोगी।

"चुप"! लड़की ने बहुत ही खूबी के साथ किन्तु धीरे से कहा—"तुमने मुझे धोखा दिया। अच्छा हो, कि तुम मुझे जाने दो।"

"कहाँ ?"

"जहाँ मेरा जी चाहे।"

"यह असम्भव है !"

"तुम्हें शर्म नहीं आती।"

यह सुनकर पोस्टमास्टर साहब बाँई तरफ को हटे। लड़की भी उसी के अनुसार, सामने अपने बांये हाथ की ओर खिसकी जिसमे कि अन्तर उतना ही रहे। वे और खिसके और लड़की ने भी ऐसा ही किया। यहाँ तक, कि वे इस पोजीशन पर आ गये, कि अगर कोई कमरे में दूसरे दरवाजे से (जो खुला था) भीतर घुसे तो उसकी तरफ पोस्टमास्टर साहब की पीठ रहे। इसी समय अचानक मेरे दिल में एक विचार पैदा हुआ। एक कम्बल पड़ा था बड़ा सा। नंगे पैर तो मैं था ही। कम्बल लेकर बिजली की तरह मैं भीतर झपटा। पोस्टमास्टर साहब ने किसी मनोरञ्जक विचार से चारपाई पर अपना बायाँ पैर रक्खा ही था, कि फाँस दिया मैंने जाल में! उनके सिर पर कम्बल डालकर जो घसीटा, तो इसके पहले ही, कि वह आवाज निकाल सकें, मैंने उनका सिर और मुंह पकड़ कर गिरा दिया। "मार डालूँगा"--मैंने उनके कान में घुटी हुई आवाज में कहा।

"कौन है !"—उन्होंने कहा।

"मौत का दूत"—मैंने कहा--चलो जहन्नुम की तरफ।

वे बोले--"मुझे मारोगे तो नहीं !"

मैंने उनकी गर्दन एक कपड़े से इस तरह बाँधते हुये, जैसे बोतल पर कपड़ा बाँधते हैं, कहा—"हरगिज नहीं !"

वे बोले—"तुम हो कोन ? शोर मत मचाना।"

यह कार्यवाई करके मैं जो लड़की की तरफ देखता हूँ तो वह गायब। मैंने चुपके से पोस्ट मास्टर साहब के कान में कहा- -"पड़े रहो।" लेकिन वे जब उठने लगे, तो मैंने उन पर चारपाई औंधा दी और कमरे से निकल कर जो दालान की तरफ आया तो मेरी एक बड़ी 'बी' से टक्कर हो गई। उनके मुँह से "उँह" और "मूँडीकाटे……!" फिर उन्होंने जो अपनी मशीनगन सँभाली तो मैंने अपने क्वार्टर में आकर दम लिया। पोस्ट मास्टर साहब ने कोई दस मिनट तक शोर-गुल मचाया है तो सभी इकट्ठा हो गये। मैं भी पहुँचा, धन्यवाद है कि मेरे ऊपर किसी का सन्देह तक न था। मुहम्मद उम्र साहब ने भी कुशल-पूर्वक चारपाई और मुंठा उस जगह से हटा दिया था। किस्से ने इस तरह तूल पकड़ा कि ग्यारह बजे तक हो-हल्ला होता रहा। पोस्ट मास्टर ने यह कहानी गढ़ी थी, कि चोर आया, लेकिन जाग हो गई तो चोर भाग गया।

अब प्रगट है, कि यह घटना मेरे लिए किस तरह पहेली होगई। यह तो निश्चय था, कि वे बड़ी 'बी' जो सिर काटने को कहती थीं पोस्ट मास्टर की बीबी थीं। लेकिन सवाल यह था, कि लड़की कहाँ गई ? और बीबी के होते हुए पोस्ट मास्टर को उसकी जरूरत कैसे पड़ गई ? फिर वे कैसे मामा और वह कैसी भांजी। न तो मेरे समझ में आया और न मुहम्मद उम्र साहब की बुद्धि ने ही कुछ काम किया।

दूसरे दिन की बात है, कि यह काम भी जाँच की सीमा को पहुँच गया, कि पुराने जमाने में न केवल प्रेमियों की ही जान खतरे में रहती थी, बल्कि उसके सन्देश ले जाने वाले भी अपने कर्तव्य पालन के लिए कठोर दण्ड पाते थे। पोस्ट मास्टर ने बुढ़िया को सावधान कर दिया,

कि अगर वह उनकी तरफ रुख करेगी, तो मार डाली जायगी। मुहम्मद उम्र साहब के मकान में जाकर गुनगुनाती। वे दूसरी तरफ झाँकने न देते थे। न पोस्ट मास्टर की हालत से ही कुछ अनुमान लगा सका। और इसी हालत में दिन बीत रहे थे। समझ में न आता था, कि क्या करूँ? पोस्ट मास्टर का क्वार्टर कब्र की तरह शान्त और बन्द था।

जब मेरी परेशानियाँ अधिक बढ़ गईं, और मैं यह सोच रहा था, कि अब जरूरी मुझे कोई बेवकूफी का काम करना पड़ेगा, कि एक और ही मामिला सामने आया। एक चिट्ठी आई। बीसियों मुहरें लगी होंगी। मेरे पुराने पते पर आया। वहां से घूम-फिर कर एक दूसरी जगह होती हुई अब मुझे मिली। यह 'रशीदी' के नाम थी। अर्थात् 'ब' साहिबा की चिट्ठी थी। मैंने लिफाफा खोलकर चिट्ठी पढ़ी। अल-काब और आदाब नादारद। बड़ी दीनता से लिखा था:—

अगर आपको मुझमें तनिक भी हमदर्दी है तो खुदा के लिए मेरी मदद कीजिये। मेरे पिछले अपराधों को माफ कीजिये। मैं जिस मुसीबत में हूँ, खुदा दुश्मन को भी ऐसी मुसीबत में न डाले। अगर आप यहाँ दो दिन के लिए आ सकें तो वर्तमान पता निम्नांकित है। मैं आपसे जरूरी सलाह लेना चाहती हूँ! मेरी मौत और जिन्दगी का सवाल है। इस चिट्ठी को तार समझें। देर न करें। इस पते पर अवश्य आयें।

आपकी

'ब'

पता·········।

मैंने ऊपर लिखी हुई चिट्ठी पढ़ी। एक और जंजाल में फँस गया

यह मजमून हुआ, कि एक से छूटे दूसरे से फँसे। यह चिट्ठी कोई महीना पहले की चली हुई थी। सवाल यह, कि समय बीत चुका था, या मैं अब भी वहाँ पहुँच जाऊँ। रेलवे मुलाजिम को छुट्टी मिलने में भी एक सप्ताह लग जाता है। क्या करूँ, क्या न करूँ? कुछ समझ में आया, कि क्या करूँ? एक की जगह पर अब दो मामिले सामने थे, कि तीसरा एक और सामने आ गया। वह यह, कि उसी दिन एक बेवकूफ मुसाफिर की लापरवाही से मेरे दाहिने हाथ की कलम की उँगली दब गई। कुचल कर भरता हो गई। ऐसी कि तकलीफ और दर्द के मारे इस बात का कायल होना पड़ा कि प्रेम का इलाज पुलिस के भी पास है, तो एक हद तक ठीक है।

अब ऐसी हालत में मैं इससे अलावा और क्या कर सकता था, कि छुट्टी के लिए एक अर्जी दे दूँ। उँगली के इलाज का भी बहाना हाथ आया। दूसरा काम यह किया, कि 'च' साहिबा को चिट्ठी लिखी, कि मुझे शीघ्र तार दो, कि तुमसे आकर मिलूँ। इस चिट्ठी में मैंने अपना नाम और पता प्रकट कर दिया।

दूसरे दिन की बात है, कि मुझे इन्हीं 'च' साहिबा का एक तार मिला। यह तार भी चिट्ठी की तरह पुराने पते से होकर चिट्ठी की ही चाल से आया था। इस तार में लिखा था कि अगर आ सकते हो तो तीन दिन के अन्दर अन्दर आओ।

प्रगट है, कि मीयाद कब की खतम हो चुकी थी। इसी दिन शाम को फिर एक चिट्ठी मिली, जो तार के पीछे ही पीछे घूमती हुई आई। यद्यपि मियाद बीत जाने के बाद आई थी। केवल थोड़े से आकांक्षा-पूर्ण शब्द थे—

"समय बीत चुका। मुझे विश्वास है, कि मेरे सन्देश शायद आप तक नहीं पहुँचे; नहीं तो आप जरूर आते। और अगर पहुँचे भी हों तो अब तकलीफ करने की जरूरत नहीं। नहीं तो हिमायूँ की तरह पछताना पड़ेगा। मेरी और महारानी कर्णावती की तकदीर कहीं एक सी तो नहीं है। पानी सिर से निकल चुका। आपसे और शायद दुनिया से हमेशा के लिये विदा होती हूँ।

आपका

"म"

मेरा रणथम्भौर पोस्टमास्टर का घर था। और मैं जरूर इस किले को छोड़कर पहुँच जाता। लेकिन अब तो बेकार ही था। अतः अफसोस और धैर्य धर कर बैठ गया। लेकिन ईश्वर बड़ा कारसाज है। मामिले ने ऐसा जबर्दस्त पलटा खाया, कि एक ऐसा विचित्र मामिला सामने आया है, कि बस सुनिये और उसे प्रणाम कीजिये।

× × ×

जाड़े के दिन थे। रेलवे की घड़घड़ाहट से आँखें बचाकर रात चुप और मौन थी। मैं अपने कमरे में पड़ा हुआ उँगुली के दर्द से कराह रहा था, कि हल्की सी नींद सी मालूम हुई। लेकिन शीघ्र ही किसी असाधारण आवाज से नींद खुल गई। कमरे की खिड़की पर ऐसी आवाज आई, जैसे कोई थपकी देता हो। मैं उठा, और आहट लेता रहा। लेकिन फिर सन्नाटा हो गया। मैं उठा और मैंने खिड़की खोलकर देखा। वहाँ कुछ भी न था। केवल वहम था। लेकिन नहीं, मैंने खिड़की बन्द भी न की थी, कि फिर सन्देह हुआ। और अब खटका दरवाजे की तरफ मालूम हुआ। मैंने रोशनी ली और दरवाजे

की तरफ पहुँचा !—"कौन है ?" कहकर मैंने दरवाजा खोला। लालटेन ऊँची करके देखता जो हूँ तो चादर में लिपटी लिपटाई··· ।"

"अरे" मेरे मुँह से सहसा निकला और पूर्व इसके, कि मैं कारण पूछ सकूँ एक दबी हुई आवाज निकली—"मुझे बचाओ !" मैं उनका विचार समझकर एक किनारे हो गया, और वे भीतर चली आईं। स्वयं दरवाजा बन्द कर लिया। अब मैं परीशानी की तसवीर बना हुआ सोच रहा था, कि यह स्वप्न तो नहीं है। मैंने कमरे में लाकर बिठा दिया। उनका मुँह उसी तरह लिपटा हुआ था। देखने के लिये सिर्फ एक सूराख था। मैंने उन्हें पलंग पर बिठा दिया और उन्हें तकलीफ में देखकर स्वयं दरवाजे के पास इस तरह बैठ गया कि आड़ रहे। पूर्व इसके कि मैं पूछूँ; उन्होंने स्वयं कहा—"आप मुझे हद से ज्यादा बेहया और धृष्ट समझते होंगे, लेकिन खुदा के लिये मेरा हाल सुनने के बाद कोई राय कायम कीजियेगा !"

मैंने विश्वास दिलाया और हर तरह से मदद देने का वायदा किया। इस पर उन्होंने संक्षेप में अपना हाल सुनाया। कहानी सचमुच बहुत ही अनोखी और विचित्र थी। संक्षेप में इस प्रकार है—पोस्टमास्टर उनके सौतेले भाई के मामा थे। माँ मर चुकी थी। बाप और सौतेले भाई थे। बाप ने स्वयं उनकी और सौतेले भाइयों की मरजी के खिलाफ शादी तै कर दी। परिणाम यह कि दोनों सौतेले भाइयों ने राय करके अपने मामा के पास पहुँचा दिया। दोनों भाई अपने दूसरे मामा के लड़के के साथ सम्बन्ध जोड़ना चाहते थे, लेकिन मुसीबत अब यह आ गई, कि स्वयं पोस्टमास्टर के दिल के किले को उन्होंने अपनी सुन्दरता से जीत लिया। पोस्टमास्टर की वर्तमान बीबी अपनी

प्रसन्न और अच्छी जिन्दगी के होते हुये भी इस तरह लाचार थीं, कि वह मजमून, कि दुकदुकदीदम, दम न कशीदम। उनके घर था, न दर। अपने पति के जुल्म और अत्याचारों को सहने के लिये ही वे उनके साथ बाँधी गई थीं। गड्ढे में गिरने का कारण भी कम मनोरञ्जक न था। पोस्टमास्टर साहब ने न केवल प्रेम प्रगट किया, बल्कि उस दिन मेरे सौभाग्य से कोई ऐसी बदतमीजी की, जो उनकी तबीयत के लिये बरदाश्त से बाहर थी। और उन्होंने यह निश्चय किया, कि पोस्टमास्टर साहब से बचने के लिये मौत से मदद लेनी चाहिये। कुँये में झाँकते डर मालूम हुआ। चुपके से रेल के नीचे कटकर मर जाने को सोचा। लेकिन रेल जो आई तो बदहवासी में गड्ढे में गिर जाने की नौबत आई। अब इसके बाद वर्तमान दशा यह थी, कि अब उनकी इज्जत, आबरू और जान तक खतरे में थी। अतः अब विचार यह था, कि मैं उन्हें कुछ रुपये कर्ज दे दूँ और टिकट दिला दूँ, जिससे कि वे फिर अपने भाइयों के पास चली जायें। यह थी वह मदद, जो मुझसे चाहती थीं।

अब जनाब सोचिये, कि इस तरह की मदद मुझसे कैसे सम्भव थी? जब वे अपना लेक्चर खतम कर चुकीं तो मैंने कहा, मेरे भी कोई नहीं है। तुम आकाश की सताई हुई हो तो मैं जमीन का सताया हुआ हूँ, इत्यादि। और यह, कि "खुदा के लिये मेरी मदद करो।"

जब उन्होंने चतुराई से काम ली, तो मैंने स्पष्टवादिता से काम लिया। शेक्सपियर ने कहा है, कि कुमारी जबान से नहीं बोलती है, तो मालूम हुआ कि हजरत शेक्सपियर की मुलाकात इसी तरह की किसी बेजबान लड़की से हुई होगी। खैर, कुछ भी हो, मैंने उनकी

चुप्पी से पूरा फायदा उठाया। हर किसी को राजी करने का ठीका लिया। पोस्टमास्टर की ज्यादतियों का सबसे बड़ा इलाज यही बताया, कि मेरे ऊपर करें। बात कुछ भी न थी। भाइयों ने जबर्दस्ती यहाँ भेज दिया और उनके बदजात मामा ने अपनी बुरी नीयत जाहिर की, कि वे अपनी जान बचाने के लिये मेरे बुरे हाल पर मेहरबानी करें।

प्रगट है, कि ऐसी हालत में एक बाप अपनी प्यारी बेटी से खुश होने के अलावा कर ही क्या सकता है। उस अच्छे लगने वाले मकान की ओर भी मैंने उनका ध्यान दिलाया, कि अगर पहुँच गई अपने बुजुर्ग पिता के कब्जे में तो वे हरगिज न मानेंगे, जब तक कि वे उन हजरत के निकाह में न दे दें, जिनके साथ निकाह करने को ये पहले ही मौत का सन्देश मान चुकी थी।

जब इन सारी बातों के सुनने के बाद भी वे चुप रहीं तो मैंने अगला कदम उठाना चाहा। तकदीर साथ थी। इसी रात क्या, बल्कि दो-तीन घंटे पहले ग्यारह बजे की गाड़ी से मुहम्मद उम्र साहब की प्यारी बेगम साहिबा आई थीं। सवाल यह था, कि क्यों न मुहम्मद उम्र साहब के घर में पहुँचा दिया जाय।

× × ×

पोस्ट मास्टर साहब की मजाल न थी, कि अपनी भानजी के बारे में सोच भी सकते, कि दीवार उस पार मुहम्मद उम्र साहब के मकान में मौजूद हैं। और इस घटना के हफ्ते भर के भीतर मुहम्मद उम्र साहब की रिश्ते की एक साली से इस खाकसार का निकाह हो गया; जिसमें पोस्टमास्टर साहब को अपनी बीवी के सहित शामिल होकर पुलाव वगैरह खाना पड़ा। और इसी दिन मैं अपनी प्यारी बीवी को अपने क्वार्टर में ले आया। शादी की तारीख भी एक तरह से याद करने योग्य थी। अर्थात् यह, कि सवेरे मेरी उँगुली काटी गई थी और शाम को इस खाकसार तथा कपड़ों को मिलाकर दोस्तों ने एक थर्ड-क्लास दूल्हा बनाया। यहाँ इससे बहस नहीं, कि पोस्ट मास्टर साहब

को दूसरे दिन सच्ची बात मालूम हुई तो उन्होंने क्या किया ? सवाल यह है कि मैंने अपनी प्यारी बीवी को कैसा पाया ? मैं क्या विवेदन करूँ ? बीवी एक सुन्दर रागिनी है। जिसका आकर्षक राग सभी खूबियों के साथ शादी होते ही कुछ इस तरह बेचैन हो जाता है, कि शौहर जिन्दगी भर उसी में बदहोश रहता है। बेहोशी से भरी हुई एक शराब है, जो कड़ुवाहटों के होते हुये भी अपनी बराबरी नहीं रखती। बिना बीवी और उसकी अनुपम मुहब्बत के सचमुच कोई आदमी शैतान है। दुनिया के अमनचैन के लिये उसे गोली मार देना चाहिये। जितने कुँवारे हैं, और शादी नहीं करते, सबको फाँसी मिलनी चाहिये। रात अँधेरी हो। टूटा हुआ झोपड़ा हो, गरीबी और लाचारी हो पर यदि प्यारी बीवी के साथ बिताने का अवसर मिले तो बिलकुल ठीक है, कि वह गरीबी दूसरे ही दिन झूम-झूमकर गाने लगे —

चाँदनी, दरिया, शगूफा; रागिनी, बरबत, शराब,
फट पड़ी थीं बज्म पर रङ्गरेलियाँ सब रात को।

लेकिन अफसोस है, कि—

"हमें तो मौत ही आई शबाब के बदले।"

कठिनाई से छः महीने की यात्रा खतम हुई थी, कि स्टेशन आ गया। बीवी बुरे मिजाज की हो तो उसे कलेजे से लगाओ, लड़का हो तो उससे लड़ो और प्यार करो। बदजबानी करे तो उसका मुँह चूम लेना; लेकिन सवाल यह है, कि अगर वह बेवफा हो ? तुमसे जान छुड़ाये ? किसी और की होना चाहे, या तुम्हें छोड़ देना चाहे ? या तुमसे अपना भेद छिपाये ? तब क्या करना चाहिये ? किसी का विचार है, कि रस्सी से बाँधकर रक्खो। लेकिन मेरा यही विचार है और रहेगा, कि उसे जहन्नुम में डालो, अर्थात् छोड़ दो, कि खोटी अशर्फी हमें नहीं चाहिये। मियाँ बीवी की लड़ाई प्रेम और प्रेमियों की लड़ाई है। और मेरे विचार में सभी ऐसी नवजवान और खूबसूरत बीवियों को जिंदा ही गाड़ देना चाहिये, जो अपने बदसूरत पतियों से नहीं

लड़तीं। लेकिन सवाल यह है, कि क्या ये लड़ाइयाँ दोनों के प्रेम और ईमान को भी डगमगा सकती हैं ? मेरा विचार था, कि नहीं, लेकिन प्रमाणित हुआ, कि हाँ !

× × ×

मैं नहीं कह सकता, कि आरम्भ मेरी तरफ से हुआ या मेरी बीबी की तरफ से। मैंने शादी से पहले की 'ब' साहिबा को जो पत्र लिखा था, उस पर वहाँ के स्थानीय डाकखाना ने यह नोट लिखा, कि "पाने वाले का पता नहीं है।" और पत्र मुर्दा घर में पहुँचकर खोला गया। पत्र में पता मौजूद था। अतः एक दूसरे लिफाफा में बन्द हो मेरे पास लौट आया। मैंने लिफाफा फाड़कर जो देखा, तो उसमें से पत्र निकला। इस पत्र को मैंने अपने बेगम साहिबा से छिपाया। मजाक ही मजाक में बाहर चला गया और नष्ट कर दिया। मेरे विचार में यह पत्र दिखाना उचित न मालूम हुआ। बीबी साहिबा के मन में छटपटी पड़ गई। बुरा मान गईं। वह भी इस प्रकार, कि मुझे अच्छा न मालूम हुआ। इसके बाद ही उनका सन्देह अब दूसरी तरफ गया। मेरे उस प्राइवेट बाक्स की तरफ जिसमें 'ब' साहिबा के सभी पत्र रक्खे हुए थे। और इसी प्रकार के दूसरे पत्र भी थे। उन्होंने उन पत्रों को देखना चाहा। मैंने बहाने किये। झगड़ा उठा। बदमजगी पैदा हुई। यहाँ तक, कि मैं बाक्स उठाकर स्टेशन ले गया और हिफाजत से आलमारी में रख दिया। इसी झगड़े के बीच में मैंने बेगम साहिबा को दूसरी तरह आड़े लिया। उस पार्सल में क्या चीज थी, जो पोस्ट मास्टर से छिपा कर मुझसे मँगाया गया था, और वह पार्सल अब कहाँ है ? क्या मुझे अधिकार प्राप्त है कि मैं उसके लिए आपके बाक्सों की तलाशी लूँ। यह सुन कर बेगम साहिबा का चेहरा असाधारण रूप से फक हो गया। न केवल यह, कि वे हकला गईं। उधर मैं इस बात पर तुल गया, कि जरूर जरूर तलाशी लूँगा। अगर कुछ नहीं है तब भी बाक्स लाओ। उस पार्सल में जो कुछ भी था, उससे विवाद नहीं, मगर

तलाशी न लेने देने का क्या मतलब ?, वे जिद पकड़ गईं। निश्चय हुआ, कि इस समय चूँकी जिद और विवाद है, अतः फिर कभी वे दिखाई देंगी। इससे यह बदमज़गी हुई। परिणाम यह. कि मैं स्टेशन पर ड्यूटी के लिए गया तो दिल में तरह तरह के सन्देह लेता गया। वह यह, कि अवश्य उनके पास किसी न किसी तरह के आपत्तिजनक पत्र हैं और यह भी, कि अवश्य मेरी गैरमौजूदगी से फायदा उठा कर वे आज ही उन पत्रों को बर्बाद कर देंगी। यही हुआ भी। उन्होंने कुछ कागज कमरे में जलाकर और राख को पानी में मिलाकर खिड़की से बाहर फेंक दिया। मैं जो लौटकर आया तो सबसे पहला काम मैंने यही किया, और बहुत जल्द कमरे के फर्श पर ध्यान देकर पता चला लिया। जले हुये कागज़ के टुकड़े, बिना किसी जरूरत के अँगीठी अपनी जगह से उठी हुई, उसमें कागज जलाये जाने के प्रमाण मौजूद ! शेष प्रमाण खिड़की के बाहर पानी से मिल गया। क्योंकि कागज के टुकड़े अच्छी तरह पानी में घुल नहीं गये थे। अतः इस बात पर झगड़ा हुआ, और मेरे लगाये हुये अपराध की वे बिलकुल जवाब न दे सकीं। लेकिन अपनी जिद पर अड़ी रहीं, कि कोई कागज नहीं जलाया गया। इस झगड़े के बाद ही मेरी बुद्धि किसी दूसरी तरफ आकर्षित हुई।

शादी के दूसरे ही दिन की बात है। मेरी उँगली तो बंधी हुई थी ! दफ्तर का काम तो ज्यों त्यों करके कलम को बीच वाली और छुंगुली के पास वाली उँगली से पकड़ कर चला लेता था। लेकिन एक दोस्त को पत्र लिखने की जो जरूरत पड़ी तो बेगम साहिबा से लिखने को कहा। उन्होंने लिखना न जानने की असमर्थता प्रकट की। यद्यपि चौखुंटे अक्षर बना कर वे मुझे लिख चुकी थी। मैंने आश्चर्य के साथ जो पूछा, तो मुसकुराकर कहा कि वैसा ही या उससे मिलता-जुलता बुरा-भला लिख सकती हूँ। समय ही ऐसा था। प्यारी और नई नवेली बीबी की यह अदा भा गई। कलेजे से लगाकर मैंने कहा कि

वैसा ही लिख दो। अतः वैसा ही नहीं, लेकिन हाँ उसी तरह बुरा-भला उन्होंने लिख दिया। यह एक बहुत ही साधारण घटना थी, जिसकी तरफ शादी और प्रेम के तूफान में कौन ध्यान दे सकता है, लेकिन अब चूँकि तरह तरह के सन्देह मौजूद थे, अतः शीघ्र ही मैंने यह इलजाम लगाया कि तुम जान बूझकर अपनी लिखावट छिपाती हो, जिससे प्रमाणित है कि तुम्हारी असली लिखावट की शान कुछ दूसरी ही है और उस लिखावट में कुछ पत्र इत्यादि मौजूद हैं या बर्बाद कर दिये गये हैं। यह कि वे अपराध को भी रद् न कर सकीं थीं। क्योंकि मैंने एक नहीं, दर्जनों घटनायें गिना दीं। जब उन्होंने लिखने से असमर्थना प्रकट की थी और वे बराबर ही असमर्थता प्रकट करती रहती थीं। जितनी उनकी तालीम थी उससे साफ प्रगट होता था, कि इनकी तरह शिक्षित लड़की केवल लिखने से इस तरह लाचार रहे। अतः उस दिन से सचमुच पूछिये तो मुझे अपने बीबी से घृणा हो गई। उनके घर वाले मुझसे अपरचित थे। उन्हें विवाह की खबर तो मिल गई थी, लेकिन बाप उनके बहुत नाराज थे। इस तरह, कि उनसे मेरे मिलने की नौबत तक न आयी थी, और उन्होंने समझ लिया था कि उनकी लड़की मर गई। अब इन घटनाओं पर मैंने विचार किया तो साफ मालूम हुआ कि जरूर बाप की शिकायत ठीक है और मामिला असल में कुछ दूसरा ही है। इन सभी सन्देहों का संभव सुबूत एक दिन इस तरह मिल गया, कि अचानक मैंने उनकी सहेली का पत्र पकड़ लिया। जिसमें उसका पूरा प्रमाण मौजूद था, कि मेरी बीबी के कोई बेचैन प्रेमी हैं और उनकी सहेली ने उनसे पूछा था, कि क्या अब भी उससे पत्र-व्यवहार करती हो या नहीं? लेकिन इसका जवाब बेगम साहिबा के पास मौजूद था। उन्होंने मेरे दो पत्र इसी प्रकार के सामने रख दिये। जिससे प्रमाणित होता था, कि मेरी भी कोई दूसरी प्रेमिका है। ये वे पत्र थे; जो मेरे दोस्त ने मुझे 'ब' के बारे में लिखे थे। क्रोध के वश में होने कारण मैंने स्वीकार कर लिया, कि जरूर और जरूर एक

प्रेमिका और भी है। इस पर गुस्से में बेगम साहिबा ने भी स्वीकार कर लिया कि जब यह बात है तो थोड़ी देर के लिये मान लिया जाय, कि अगर मेरा भी कोई प्रेमी है तो रहने दो। परिणाम स्वरूप बेहद बदमजगी पैदा हो गई। फौरन् मैं तलाक दे देता, अगर कहीं खुदा का डर न होता। नतीजा यह, कि मैंने कह दिया, कि तुम मेरे काम की नहीं, जाओ अपने प्रेमी के पास और उधर उन्होंने कह दिया कि, तुम मेरे काम के नहीं, जाओ अपनी प्रेमिका के पास। परिणाम यह हुआ, कि इस घृणा के योग्य बीवी को रास्ते का खर्च देकर मैंने बिदा कर दिया। और जहाँ का टिकट बताया, दिला दिया। वह अपनी सहेली के यहाँ चली गईं। प्रकट है, कि मुझे क्या मतलब? जाओ जहन्नुम में! ये मेरे शब्द थे।

फूल के बहार के दिन समाप्त हो गये! इस खूबसूरत लड़की से शादी करने का यह परिणाम हुआ। अफसोस और दुख होता था। जब ध्यान आता था कि ऐसी शकल और सूरतवाली लड़की और चली! फिर मैंने भी यह कसम खा ली कि अब जन्म भर शादी न करूँगा! न ऐसी खूबसूरत लड़की बीवी मुझे मिलेगी और न मैं शादी करूँगा। चलिये छुट्टी हुई। वही मसल हुआ कि "मोर कटा पैर गजी" मैंने निश्चय कर लिया कि पलट कर कभी खबर न लूँगा। लेकिन निवेदन यह है, कि यह पूर्णतर अवकाश भला कहीं प्रणयी चित्त को चैन लेने देता है। तोबा कीजिये। अभी मुश्किल से बीस दिन भी न हुये होंगे, कि समय की गति ने फिर से एक नई और अनोखी बात उठाई। अर्थात् यह, कि जब रिश्तेदारों को मालूम हो गया, कि मेरी अपनी इच्छा से की हुई शादी का यह परिणाम हुआ तो लोगों ने सोचा, कि लाओ फिर उसे फाँसू। मेरी शादी करने का लोग 'विचार' कर रहे थे। यही नहीं, बल्कि बड़ा जोर भी लगाया गया। लेकिन मैंने कोरा जवाब दिया। साफ इन्कार कर दिया। क्योंकि अभी शादी की कड़ुवाहट दूर न हुई थी। जिस वक्त अपनी बीवी का खूबसूरत चेहरा

सामने आता था, दिल मसल कर रह जाता था, कि हाय तकदीर। चमकती हुई चाँदनी, लेकिन खोटी। सारी घटनाओं को सोचकर जान निकल जाती थी।

मैंने इसी महीने में दो महीने की छुट्टी ली और घर पहुँचा। नई दिलचस्पी पैदा हो गई। वह यह, कि एक दिन "ब" साहिबा की चिट्ठी आ धमकी। चूँकि अपने पुराने पते पर था, पत्र शीघ्र मिल गया। उनका पता अलबत्ता बिलकुल नया था। अतः इन दोनों बातों में मैंने दिलचस्पी लेना शुरू कर दिया। शादी में भी और "ब" में भी। "ब" साहिबा का पत्र विचित्र था। पत्र में पुरानी जिन्दादिली की काफी झलक थी। मजा यह, कि अपनी बीती मुसीबतों की चर्चा तक न थी। अनुमान लगाया गया था, कि मैं उनको भूल गया हूँगा, या यह सोचता हूँगा, कि उनके दुश्मन कूँच कर गये इस सुन्दर दुनिया से। यह भी उम्मीद की गई थी, कि अब तो मैं अपना नाम और पता बता दूँगा। मैंने भी इस पत्र का बहुत ही जिन्दादिली से जवाब दिया। खास बात इस पत्र की यह थी, कि मुझे बजाय भाई वगैरह के मददगार की आकर्षक उपाधि से सुशोभित किया गया था, और इसी हैसियत से मैंने उनको जवाब भी दिया। 'मददगार' शब्द किसी प्रसिद्ध रिश्ते से साथ करने का पूरा सबूत था।

मेरा जवाब पाकर उन्होंने अपनी पुरानी सारी जिन्दादिला को न केवल फिर से जीवित कर दिया, कि बल्कि नवीन ढंग "मददगार" की पट्टी पर उन्होंने ऐसा अंकन किया, कि सारी खूबियाँ फिर से जाग उठीं। वही मैं था, और वही शब्द "मददगार" ने क्या से क्या कर दिया। परिणाम यह, कि एक दिलचस्प आकर्षण था, जो मुझे इस गुमनाम शोख और कठोर लड़की की तरफ खींचता रहा था। प्रेम ! हरगिज नहीं। लाहौल बिला कूह !! दिलचस्पी, जिन्दादिली, रंगीनी और चमकता हुआ पत्र इस परवाने के लिए आग के समान होता था। नाम बताने के लिए उन्हें भी कसम और मुझे भी कसम ! यह पत्र

व्यवहार ऐसे जोरों से हुआ, कि रोज उनका पत्र आता और मेरा भी जाता।

मेरी छुट्टी का दिन समीप आ रहा था और मुझे ध्यान आया, कि गुमनाम दोस्त से मिलने की कोशिश करनी चाहिये। अतः मैंने एक पत्र लिखा कि—दोस्त, मालूम होता है तुम्हारी शामत आने वाली है। तुम कहती हो, कि मै वहाँ आया तो तुम नहीं मिलोगी। खैर, तुम न मिलना। देखें तो सही, कौन हारता है। हम या तुम? और आखिर वह कौन सी बात है, तुम न मिल सकोगी! कान खोल लर सुन लो, कि अब हम दिन रात इस चिंता में रहते हैं, कि किस तरह इस शोख को फाँसूँ।

इसके जवाब में उन्होंने लिखा, कि शायद डाक्टरी शुरू करके स्वयं पागलखाना के डाक्टरों का इलाज करने वाले हो। मुझे एक गैर होकर इस तरह के वाक्य कहने पड़ते हैं, लेकिन लाचार हूँ,। भाई साहब, तुम यहाँ आवो तो सही! अपने आप, बेजान होकर लौटोगे! अफसोस बेवकूफी बहुत बड़ा रोग .....।

× × ×

वह दिन भी आया, कि मेहरबान 'ब' साहिबा के दरवाजे पर तो नहीं, उसके पते पर पहुँचे, जो समय से पहले तै हो चुका था। एक बहुत बड़ा आलीशान मकान था। नौकर मौजूद नहीं, बल्कि मानों मेरी प्रतीक्षा में था। यह खाकसार "रशीदी" साहब था। एक बहुत ही साफ और सुनहले ड्राइङ्ग रूप में मुझे बिठाया गया। अब मै चारों तरफ 'ब' साहिबा के लिए निगाह दौड़ाता हूँ, कि इतने में दरवाजे का एक पर्दा कुछ हिला। मेरा दिल धड़क रहा था। कोई "बहुत सुन्दर" कोई मुझे देख रहा था। शीघ्र ही कानाफूसी हुई। इस तरह तरह तेज हुई, कि कह नहीं सकता। एक मीठे कहकहे के साथ मुलायम और लोच आवाज आई—"मैं स्वयं जाती हूँ।"—जोर के साथ काना

फूसी—"उँहँ·····ठहरो·· ··दबी हुई हँसी की आवाज कशमकश ··· · फिर हँसी ···कम्बख्त······जाने दे।"

मैं चुपचाप यह आवाज सुनता रहा। मेरे दिल का विचित्र हाल था। हँसी को रोकते हुये पर्दे से वही कोमल और मीठी आवाज आई—

"सलाम आलेकुम ?"

"वालेकुम सलाम।"—मैंने काँपते हुये स्वर में जवाब दिया।

वे बोलीं—क्या मैं आ सकती हूँ ?

मैंने कहा—प्रसन्नता से।

मेरा यह कहना था, कि पर्दे को एक मुलायम हाथ ने हिलाया और बहुत ही साधारण ढङ्ग से एक फूल सी सूरत प्रगट हुई। चेहरे पर सुन्दरता और कोमलता की छवि नाच रही थी ! ऐसा जान पड़ता था,मानों साक्षात् मूर्ति हो। मुसुकुराते हुये मेरी तरफ देखकर फिर पूछा —क्या मैं आ सकती हूँ ?

मैं खड़ा हो गया और पूर्व इसके, कि मैं कुछ कहूँ, वे भीतर आ गईं। वह मुसुकुराना, वह नजाकत, और वह अदा से धीरे-धीरे चलना। हँसी को इस तरह रोके हुये, कि खुदा की पनाह ! चेहरे पर नवजवानी और शरारत की आभा झलक रही थी। अब मेरे साथ कोई बहुत बुरी शरारत और बन्दिश होने वाली है ! मैंने आगे बढ़कर स्वागत किया ! कमरा सूना था। परस्पर हाथ मिलाया तो उनका चेहरा शोखी और 'प्रेम' से चमक उठा······। मैं लाचार था। देखते ही देखते·····बेखबरी में मानों मैंने उन्हें घसीट लिया। और पूर्व इसके, कि उन्हें खबर हो सके, वे मेरी गोद में थीं। आते ही जो ···लेकिन यह सब कुछ पलक मारते ही मारते बहुत कम समय में हुआ, कि ·· पर्दे को चीर कर कोई निकला·····जबर्दस्त चीख ···हँसी · ·· कशमकश ···· यह तीसरा कौन मुझसे उलझ पड़ा छुड़ाने को··· ·· अरे ! मेरा कलेजा धक् से हो गया। वह अपने आप हाथों से छूट गईं। इस तरह, कि धम्म से गिरीं उल्टी। और यह जा, वह जा !!

मेरे सामने मेरी प्यारी बीवी खड़ी थी। और मैं हैरान, परीशान, शर्मिंदा, इस चिन्ता में कि इन दोनों में "ब" कौन है? यह या वह!

मैंने घरवाली से पूछा—"ब" कौन है?

उसने मुसकुराकर कहा—और 'रशीदी' कौन हैं?

मैंने कहा—मैं।

उसने कहा—मैं।

मालूम हुआ, कि जिनके साथ मैंने सारी ढिठाइयाँ कर डालीं, मेरी बीवी की सहेली थीं। और जब मेरी बीवी ने "रशीदी" की जगह पर मुझे देखा, और उन्हें बताया, कि मैं कौन हूँ, तो मेरी बीवी के मना करने पर भी मुझे बेवकूफ बनाने आईं। नतीजा बड़ा फोका रहा।

परिणाम

यहाँ इस बात को प्रगट करने की जरूरत नहीं, कि काश, मेरी उँगुली न कटी होती, तो मेरी लिखावट शीघ्र ही मेरी बीवी पहचान लेती और मालूम कर लेता, कि कौन हूँ? या यह, कि काश मुझ खाकसार अर्थात् रशीदी को उसने और दो एक पत्र डालने के विचार से न रख लिये होते, मेरे उन पत्रों के सहित जो मैं उसे लिखे पोस्ट मास्टर के कब्जे में न पड़ जाते और वह उस डर के मारे, कि कहीं वे मेरे हाथ न लग जायें! अपनी लिखावट छिपाने के लिए लाचार होतीं; बल्कि अफसोस इस बात का है कि हम दोनों ने गलती की कि बेगुनाह होते हुये भी हम दोनों ने एक दूसरे को अपना भेद नहीं बताया और भुगता।

मैं नौकरी पर बीबी के साथ पहुँचा। स्टेशन की आलमारी से 'ब' साहिबा के वे पत्र लाकर दिये, जो स्वयं उसके लिखे हुये थे। लेकिन बेवकूफ पोस्ट मास्टर मेरे वह पत्र नहीं देता, जो मैंने "रशीदी" बनकर "ब" को लिखे थे। अपनी समझ में वह हमारे कल दाबे हुये हैं। बस।

"एक अहमक"